मूल्य : 20/-
पंजी. संख्या : 153/2016-17

वर्ष : २
अप्रैल २०१७, विक्रमी सम्वत् २०७४-७५
सृष्टि सम्वत् १९६०८५३११८, दयानन्दाब्द १९५
अंक : १०

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम ।।

सत्य और ज्ञान से भरपूर आर्यसमाज नोएडा का मुखपत्र

# विश्ववारा संस्कृति

## मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

## "सा प्रथमा संस्कृतिविश्ववारा"

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु। अवतु माम् अवतु वक्तारम्।।

ईश्वर का व्यापक ज्ञानस्वरूप पूज्य और सहज स्वभाव जानकर हम उसकी उपासना करें तथा जीवन में सदा सत्य का आचरण करें।

युग प्रवर्तक महर्षि
दयानन्द सरस्वती
(1824-1883)

महात्मा हंसराज

महाशय धर्मपाल (MDH) को पत्रिका भेंट करते हुए
महामंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी।

आर्ष गुरुकुल नोएडा के ब्रह्मचारी हवन करते हुए।

गांधी स्मृति प्रतिष्ठान में आयोजित सम्मान समारोह में आर्य कै. अशोक गुलाटी को उनकी उत्कृष्ट समाज सेवा के लिए 'भारत गौरव सम्मान' देते हुए पूर्व राज्यपाल श्री भीष्म नारायण सिंह।

ओ३म्

॥ कृण्वन्तो विश्वमार्यम॥

# विश्ववारा संस्कृति

## मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

**संरक्षक**
श्री आनंद चौहान, श्री सुधीर सिंघल
श्री रविन्द्र सेठ 'प्रधान'

**प्रबंध संपादक**
महामंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी

**प्रधान संपादक**
आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार

**व्यवस्थापक**
ओमकार शास्त्री

**प्रकाशक और मुद्रक**
स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं प्रधान संपादक डॉ. जयेन्द्र कुमार द्वारा वत्स ऑफसेट, मुद्दा हाऊस, सी-ब्लॉक, बारात घर, चौड़ा रघुनाथपुर, सेक्टर-22, नोएडा से मुद्रित एवं आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित किया।

**Title Code : UPMU-200652**

**घोषणा पत्र संख्या : 153/06.06/2016-17**

**मूल्य**

एक प्रति : 20/- वार्षिक : 250/-
पांच वर्ष : 1100/- आजीवन : 2500/-

विदेश में वार्षिक शुल्क : 3100/-


# अनुक्रमणिका


| क्रम सं. | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 1. | सत्य... | 3 |
| 2. | गीता ज्ञान | 4 |
| 3. | हिन्दी साहित्य निर्माता : महर्षि दयानन्द | 5 |
| 4. | शिष्य की जीवन नैया पार... | 7 |
| 5. | राष्ट्र के कर्णधार कौन | 8-9 |
| 6. | परमात्मा कवि है : देवस्य... | 10-11 |
| 7. | आर्य समाज का दूसरा नियम | 12-14 |
| 8. | स्वास्थ्य : स्वस्थ जीवन के लिए | 15 |
| 9. | महानता के स्तम्भ : महात्मा हंसराज | 16-17 |
| 10. | दर्शनों का आध्यात्मिक... | 18-19 |
| 11. | जीवन में सफलता | 20 |
| 12. | आर्ष गुरुकुल प्रवेश सूचना | 24 |


**पाठकवृंद** : कृपया स्वयं समाज एवं राष्ट्र के उत्थान के लिए 'विश्ववारा संस्कृति' के आजीवन सदस्य बनकर जीवन पथ को पुष्पित, प्रफुल्लित और प्रमुदित करें। अपका चित्र पत्रिका में प्रकाशित होगा। आपके बहुमूल्य सुझावों का हम स्वागत करते हैं।

**लेखकवृंद** से अनुरोध है कि रचना मौलिक एवं अप्रकाशित हो, रचना का लेखन स्पष्ट और सुपाठ्य हो। दो प्रतियां उस रचनाकार को भेज दी जाएगी, जिनकी रचना प्रकाशित हुई है।

## विज्ञापन दर

| | | |
|---|---|---|
| पिछला कवर पृष्ठ | : | 5100 रुपये |
| कवर पृष्ठ नं.-2 | : | 3100 रुपये |
| कवर पृष्ठ नं.-3 | : | 2500 रुपये |
| पूरा पृष्ठ अंदर | : | 1000 रुपये |
| आधा पृष्ठ अंदर | : | 600 रुपये |

'विश्ववारा संस्कृति' में सभी पद अवैतनिक हैं। प्रकाशित विचारों से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गौतमबुद्धनगर होगा।


**संपादकीय कार्यालय**

आर्य समाज, बी-69,
सेक्टर-33, नोएडा
गौतमबुद्धनगर, उप्र
: दूरभाष :
0120-2505731

Web : www.aryasamajnoida.org, E-mail : info@aryasamajnoida33@gmail.com

# संपादकीय...

## 'प्रश्नों से पैदा होता है बोध'

महर्षि दयानन्द बोधोत्सव महाशिवरात्रि के पावन पर्व पर सम्पूर्ण आर्य जगत में बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। महर्षि दयानन्द ने शिवरात्रि के अवसर पर व्रत रखा। रात्रि में दूध को शिवलिंग पर उड़ेलते देखा। मस्तिक में प्रश्न पैदा हुआ। जिस पर चूहे मलमूत्र कर रहे हैं जो अपनी रक्षा भी नहीं कर पा रहा है, ऐसा शिव सच्चा शिव नहीं हो सकता। प्रश्न का उत्तर रात्रि के 12 बजे पिता से पूछा। संतोषजनक उत्तर न मिलने पर मां से पूछा पर मायूसी हाथ लगी। घर छोड़ा और जीवन आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय एवं योगाभ्यास में लगा दिया। प्रश्न का उत्तर जानकर सम्पूर्ण संसार के सामने ईश्वर का सच्चा स्वरूप बताकर सच्चे शिव को खोज लिया।

एक राजकुमार छोटा बालक जिसका नाम सिद्धार्थ था, उसने एक बूढ़े झुके हुये व्यक्ति को देखकर अपने पिता से पूछा इस व्यक्ति का नीचे क्या गिरा है, फिर एक शव को देखकर पूछा कौन जा रहा है। इन दो प्रश्नों से बालक सिद्धार्थ महात्मा बुद्ध के रूप में बोध को प्राप्त कर गये।

जेम्सवाट ने केतली के ढक्कन को देखा, रेल का इंजन बना दिया। पेड़ के नीचे बैठे महान वैज्ञानिक न्यूटन के मन में नीचे गिरते हुए सेब को देखकर प्रश्न के समाधान के रूप में गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त को जन्म दिया। प्रश्न ही हमेशा बोध का कारण होता है। अनपढ़ धर्माचार्य, अंधविश्वासी लोग हमेशा प्रश्नों का विरोध करते हैं। प्रश्नों को जारी रखिये शायद आप और हम सभी को भी कोई बोध हो जाय।

■ **आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार**

**महर्षि दयानन्द ने शिवरात्रि के अवसर पर व्रत रखा। रात्रि में दूध को शिवलिंग पर उड़ेलते देखा। मस्तिक में प्रश्न पैदा हुआ। जिस पर चूहे मलमूत्र कर रहे हैं। जो अपनी रक्षा भी नहीं कर पा रहा है, ऐसा शिव सच्चा शिव नहीं हो सकता। प्रश्न का उत्तर रात्रि के 12 बजे पिता से पूछा। संतोषजनक उत्तर न मिलने पर मां से पूछा मायूसी हाथ लगी। घर छोड़ा और जीवन आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय एवं योगाभ्यास में लगा दिया। प्रश्न का उत्तर जानकर सम्पूर्ण संसार के सामने ईश्वर बताकर सच्चे शिव को खोज लिया।**

# सत्य...

मनुष्य को अपने जीवन में सदैव सत्य बोलना चाहिए। सत्य के द्वारा ही हम परमात्मा तथा तथा उसकी सृष्टि का वास्तविक स्वरूप समझ सकते हैं। ईश्वर निराकार है, कण-कण में व्यापक है। उसके वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए हमें सत्य का अनुशरण करना चाहिए।

उपनिषद में भी आया है- असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय।

उक्त वाक्य में यही प्रार्थना की गई है- हे परमात्मा!हमें असत् से दूर कर दो और श्रेष्ठ मार्ग पर चलाओ। साहित्यकारों ने लिखा है कि अज्ञानता बहुत बड़े दुखों का कारण है। जैसे-हिरन चमक के पीछे भाग रहा है वह चमक उसे तृप्ति नहीं दे सकती, ऐसे ही मनुष्य जिस चमक के पीछे दौड़ रहा है, वह उसकी शांति का कारण कभी नहीं बन पायेगी।

यह चमक संसार के चकाचौंध, पदार्थ और आकर्षण मनुष्य को सत्य से भटकाते हैं। इसीलिए वेदरूपी ज्ञान गंगा में डुबकी लगाकर सत्य की खोज कर आनंद स्वरूप परमात्मा की उपासना करें। परमानन्द की प्राप्ति परमपिता परमात्मा के सानिध्य में ही जाकर प्राप्त होगी। यही मानव जीवन का मुख्य उद्देश्य है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज के नियमों में 'सत्य' को अधिक महत्व दिया है। वह सत्य के लिए जिये व बलिदान हुए अनेक महापुरुषों ने सत्य को ही अधिक महत्व दिया है। एक बार अंग्रेज लार्ड नार्थब्रुक ने स्वामी जी से कहा कि आप अपने व्याख्यानों के प्रारम्भ में जो ईश्वर की प्रार्थना करते हैं, उसमें आप अंग्रेजी सरकार के कल्याण की प्रार्थना किया करें।

स्वामी जी ने निर्भीकता से उत्तर दिया कि मेरी स्पष्ट मान्यता है कि राजनीतिक स्तर पर मेरे देशवासियों की निर्बाध प्रगति के लिए तथा संसार की सभ्य जातियों के समुदाय में भारत को सम्मानीय स्थान प्रदान करने के लिए ये अनिवार्य है कि मेरे देशवासियों को पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त हो, सर्व शक्तिशाली परमात्मा के समक्ष प्रतिदिन मैं यही प्रार्थना करता हूं कि मेरे देशवासी विदेशी सत्ता से शीघ्रताशीघ्र मुक्त हों। उनका कहना था कि चाहे कमिश्नर नाराज हो जाय, चाहे गर्वनर नाराज हो जाय, चाहे चक्रवर्ती राजा ही क्यों न हो हम तो सत्य ही कहेंगे! ये था सत्य का बल।

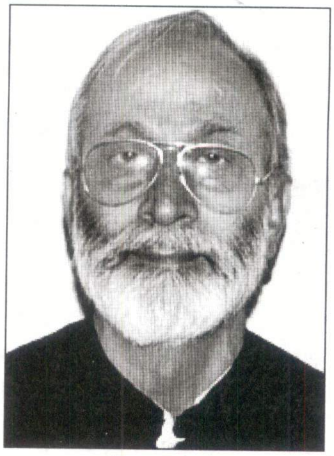

**प्रबंध संपादक**
**मंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी**

अतः आर्य समाज के चतुर्थ नियम के नियमानुसार-सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए व पांचवें नियमानुसार- सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

# दया-क्षमा

- वे ही लोग दयालु हैं जो दूसरों के लिये ऐश्वर्य की वृद्धि की इच्छा करें और ऐश्वर्य की ध्वनियों को आता देखकर प्रसन्न हों।

  -स्वामी दयानन्द

- सर्वथा सब जीवों पर दया करना भी दुःख का कारण है।

  -स्वामी दयानन्द

- निस्वार्थ भाव से दूसरों के कष्ट निवारण का नाम दया है।

  - मा. दुर्गा प्रसाद

- परमात्मा का निश्चय दया है और उसका कर्म न्याय है।

  - मा. दुर्गा प्रसाद

- जो न्याय से प्रयोजन सिद्ध होता है वही दया से।

  -स्वामी दयानन्द

- यदि जीव के कर्मों की अपेक्षा अधिक फल दिया जाय तो जीव में आलस्य और प्रमाद बढ़ेगा। इससे जीव का अहित होगा। यह न दया होगी और न न्याय।

  -पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय

- शरीर में सामर्थ्य होते हुए बुरे का प्रतिकार न करना यह क्षमा है।

  - स्वामी दयानन्द

- कुछ लोग जितनी भक्ति की चिन्ता करते हैं उतनी कर्तव्य पालन की नहीं। वे समझते हैं- भक्ति के बदले सांसारिक कर्तव्यों से छुटकारा पा जाएंगे। ऐसे लोग ही ईश्वर से अपने पापों को क्षमा करने की याचना करते हैं।

  - पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय

- आत्मिक दण्ड, आत्मा की अवनति है। शारीरिक दण्ड, वह दुख है जो इन्द्रियों द्वारा अनुभव किया जाता है।

  - पं. चमूपति

# गीता ज्ञान

**आचार्य चंद्रशेखर शास्त्री**

गीता में प्राणी मात्र का उद्धार करने की ऐसी सरल सहज व सुगम युक्तियां बताई गई हैं, जिनको व्यक्ति अपने व्यवहार में ला सकता है। ऐसा जो गीता को सम्मान की दृष्टि से देख सकता है, फिर वह हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी, पार्शी, बौद्ध आदि किसी भी धर्म को मानने वाले क्यों न हो, केवल आत्म ज्ञान और आत्म कल्याण का उपदेश रखकर पूरी निष्ठा और आस्था से गीता के अनुसार अपना जीवन यापन करता है, तो वह सभी सांसारिक काम करते हुए भी परम्तत्व की प्राप्ति कर सकता है। गीता किसी भी प्रकार की संकीर्णता की बात नहीं कहती। वह किसी भी प्रकार के भेष, संप्रदाय, अवस्था, क्रिया आदि के परिवर्तन की बात नहीं कहती। गीता व्यक्ति को सहजता से परिष्कृत और परिमार्जित करने की बात कहती है। वह व्यक्ति को शुद्ध, निर्मल, निष्कलुष, निश्छल और निर्दोष बनाने का संदेश देती है।

गीता एक अद्‌भुद ग्रंथ है। विश्व साहित्य में इसका अद्वितीय स्थान है। इसमें श्री कृष्ण ने अर्जुन को निमित्त बनाकर मानव मात्र के कल्याण के उपदेश दिए हैं। इस छोटे से ग्रन्थ में श्री कृष्ण ने अपने हृदय के विलक्षण भाव भर दिए हैं, जिनका चिन्तन मनन कर मनुष्य अपने जीवन का उद्धार कर सकता है।

गीता में प्राणी मात्र का उद्धार करने की ऐसी सरल सहज व सुगम युक्तियां बताई गई हैं, जिनको व्यक्ति अपने व्यवहार में ला सकता है। ऐसा जो गीता को सम्मान की दृष्टि से देख सकता है, फिर वह हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी, पारशी, बौद्ध आदि किसी भी धर्म का मानने वाले क्यों न हो, केवल आत्म ज्ञान और आत्म कल्याण का उपदेश रखकर पूरी निष्ठा और आस्था से गीता के अनुसार अपना जीवन यापन करता है, तो वह सभी सांसारिक काम करते हुए भी परम्तत्व की प्राप्ति कर सकता है। गीता किसी भी प्रकार की संकीर्णता की बात नहीं कहती। वह किसी भी प्रकार के भेद, संप्रदाय, अवस्था, क्रिया आदि के परिवर्तन की बात नहीं कहती। गीता व्यक्ति को सहजता से परिष्कृत और परिमार्जित करने की बात कहती है। वह व्यक्ति को शुद्ध, निर्मल, निष्कलुष, निश्छल और निर्दोष बनाने का संदेश देती है।

गीता में कर्म, ज्ञान और भक्ति की त्रिवेणी प्रवाहित होती है। जो व्यक्ति गीता के माध्यम से निष्काम कर्म और निष्काम भक्ति के मार्ग को समझ लेता है, वह अपने और अपने आस-पास के परिवेश स्वस्थ रूप देने में समर्थ हो सकता है। वह परम सत्ता के निकट आ सकता है और इसकी संपूर्ण संकीर्णताओं से विमुख हो सकता है।

गीता शास्त्र नहीं, वरन आचार-शास्त्र है इसका प्रचार आचरण बिना और किसी भी तरह नहीं हो सकता। गीता का धर्म खुला हुआ धर्म है उसके पढ़ने और सुनने की मनाही किसी को नहीं है। जिसमें जितनी सामर्थ्य है, वह गीता के बहते झरने से उतना ही ज्ञान-जल ग्रहण कर सकता है। गीता में कृष्ण ने अर्जुन से कहा था जिसकी तपश्चर्या करने की तैयारी नहीं है, जिसके हृदय में भक्ति का प्रभाव नहीं, सुनने की तीव्र इच्छा नहीं उसके सामने गीता के रहस्य भूल कर भी प्रकट नहीं करना। गीता के प्रचार का अर्थ है निष्काम कर्म का प्रचार, गीता के प्रचार का अर्थ है निष्काम भक्ति का प्रचार और गीता के प्रचार का अर्थ है त्याग का प्रचार। गीता पर अनेक टीकायें लिखी गई और अनेक धर्माचार्यो, विद्वानों द्वारा असंख्य प्रवचन दिए गए। पर अनुभव से ऐसा ज्ञान नहीं पड़ता कि गीता पर लिखी टीकाओं या प्रवचनों से निष्काम कर्म या निष्काम भक्ति को थोड़ा भी बल मिलता हो।

गीता का रहस्य गीता ग्रन्थ में नहीं छिपा, वह तो हर व्यक्ति के हृदय में छिपा है। गीता कुरुक्षेत्र में कही गयी है। संस्कृत में कुरु का अर्थ है कर्म कर। कुरुक्षेत्र यानि कर्म की भूमि। जब गीता कर्म की भूमि में कही गई है तो वहीं उसे परिश्रम के कानों द्वारा सुनकर अपने जीवन को सार्थक करने का प्रयास भी किया जा सकता है।

**न हि कल्याणकृत कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति। - गीता**

**शुभ कर्म करने वाला कोई भी मनुष्य दुर्गति को प्राप्त नहीं हो सकता।**

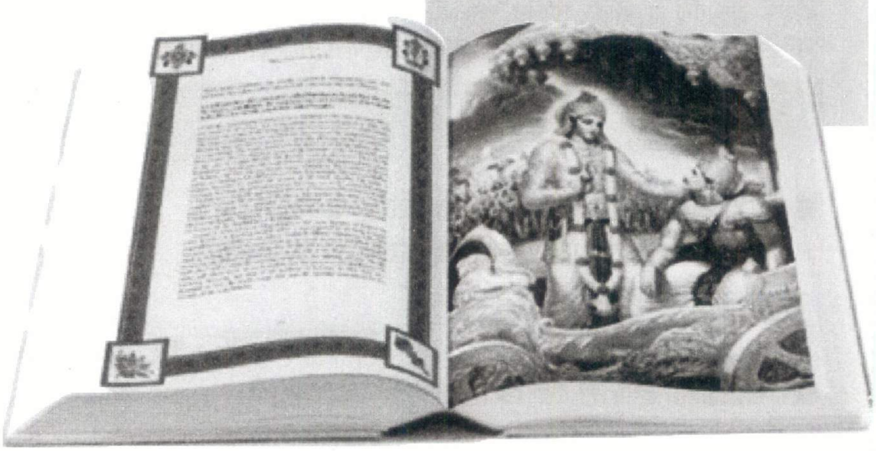

गीता में कर्म, ज्ञान और भक्ति की त्रिवेणी प्रवाहित होती है। जो व्यक्ति गीता के माध्यम से निष्काम कर्म और निष्काम भक्ति के मार्ग को समझ लेता है, वह अपने और अपने आस-पास के परिवेश स्वस्थ रूप देने में समर्थ हो सकता है। वह परम सत्ता के निकट आ सकता है और इसकी संपूर्ण संकीर्णताओं से विमुख हो सकता है। गीता शास्त्र नहीं, वरन आचार-शास्त्र है इसका प्रचार आचरण बिना और किसी भी तरह नहीं हो सकता। गीता का धर्म खुला हुआ धर्म है उसके पढ़ने और सुनने की मनाही किसी को नहीं है। जिसमें जितनी सामर्थ्य है, वह गीता के बहते झरने से उतना ही ज्ञान-जल ग्रहण कर सकता है। गीता में कृष्ण ने अर्जुन से कहा था जिसकी तपश्चर्या करने की तैयारी नहीं है, जिसके हृदय में भक्ति का प्रभाव नहीं, सुनने की तीव्र इच्छा नहीं उसके सामने गीता के रहस्य भूल कर भी प्रकट नहीं करना।

# हिन्दी साहित्य निर्माता : महर्षि दयानन्द

**श्रीमती शकुन्तला सेतिया**

**भारत** भूमि तो सदा से संतो, महापुरुषों, ऋषियों, मुनियों, वैज्ञानिकों, योद्धाओं तथा शिक्षाविदों की मातृभूमि रही है। किन्तु महाभारत के युद्ध में देश का बहुत विनाश हुआ। विद्वान मारे गये। ज्ञान-विज्ञान नष्ट हो गया। ऋषि मुनियों की परम्परा लुप्त हो गई। सत्य सनातन वैदिक धर्म की अवस्था तो आटे के उस दीपक की भांति हो गई थी जिसे अन्दर रखें तो चूहे ले जाये। विदेश जाना हो गया तो धर्म भ्रष्ट, किसी अस्पृश्य से छू गये तो धर्म भ्रष्ट, मुसलमानों के हाथ का खा लिया तो जाति च्युत। ऐसे घटाटोप अंधकार में एक ऐसी दिव्यात्मा की आवश्यकता थी, जो भारत देश को अविद्या के अंधकार से छुड़ाकर वेद विद्या के ज्ञानमय प्रकाश से प्रकाशित कर दे।

परम प्रभु की असीम कृपा से लगभग पांच सहस्र वर्ष पश्चात, गुजरात के टंकारा नामक ग्राम में श्रीयुत कर्षन जी के घर में एक द्विव्यात्मा का जन्म हुआ। जिन्हें हम ऋषिवर दयानन्द के नाम से जानते हैं। इस सन्यासी ने वेदों का क्रान्तिकारी भाष्य संस्कृत और हिन्दी भाषा में किया। जिससे वेद ज्ञान जन साधारण तक पहुंच सके। महर्षि वेदों का आर्य भाषा में भाष्य करने वाले सर्वप्रथम व्यक्ति हैं। देव दयानन्द बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी थे। मानव जीवन के प्रत्येक पहलू पर महर्षि की चिन्तनधारा का प्रभाव देखने को मिलता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सटीक और स्पष्ट निर्देश मिलते हैं।

ऋषिवर की विभिन्न विशेषताओं पर उनकी आध्यात्मिक और सामाजिक क्षमताओं और उपलब्धियों पर उनके मानव मात्र के कल्याण कार्यो पर बहुत कुछ लिखा गया, आपसी विचार विमर्श हुये किन्तु मुझे ऐसा लगता है कि उनकी एक अन्य विशिष्टता की ओर विद्वद्जनों का ध्यान तो अवश्य गया होगा किन्तु उसका प्रकाश जन साधारण तक नहीं पहुंच पाया और वह हैं स्वामी दयानन्द का हिन्दी भाषा का साहित्य सृजन।

**वेद प्रचार के सिलसिले में महर्षि ने भारत भर में भ्रमण किया :** इन्हीं यात्राओं के दौरान मुंगेर से भागलपुर होते हुए महाराज पौष संवत 1929 अर्थात दिसम्बर 1872 में कलकत्ता पहुंचे। अपने बंगाल दौरे के दौरान उनका परिचय वहां के उत्कृष्ट विद्वानों से हुआ। उन दिनों कलकत्ता में केशवचन्द्र सेन का बोलवाला था। श्री ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय, श्री केशवचन्द्र सेन, आदि विद्वान उनके विचारों से बहुत अधिक प्रभावित हुये। धीरे-धीरे सामान्य परिचय मित्रता की ओर बढ़ा। एक दिन केशवचन्द्र ने कहा कि स्वामी जी आप संस्कृत में ही बातचीत करते हैं। जो लोग संस्कृत नहीं जानते उनको पण्डित लोग कुछ और ही समझा देते हैं, इसलिए बहुत अच्छा हो अगर आप देशभाषा अर्थात हिन्दी में व्याख्यान आदि देने का यत्न करें। उचित बात को मानने में उन्हें कोई दुविधा नहीं थी। केशवचन्द्र सेन और ईश्वरचन्द विद्यासागर जैसे मनीषियों के आग्रह पर उन्होंने अपना प्रचार कार्य हिन्दी भाषा में आरम्भ किया।

वह क्षण निश्चय ही हिन्दी भाषा के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जा चुका है कि एक बांगला भाषा भाषी के आग्रह पर एक गुजराती भाषी ने प्रचलित लोकभाषा अर्थात हिन्दी में लिखना और और बोलना स्वीकार किया। उसे अपना लिया। जीवन के पचासवें वर्ष में सन 1874 में उन्होंने काशी में हिन्दी में अपना पहला भाषण दिया। उनके भाषण साधारण नहीं होते थे। उन्हें अपने पक्ष के समर्थन में अनेक धर्म ग्रन्थों से प्रमाण देने पड़ते थे। ऐसी तर्कसम्मत भाषा का प्रयोग करना पड़ता था, जो विरोधी पक्ष को निरस्त कर सके। कल्पना की जा सकती है कि कितनी तन्मयता और सूझ-बूझ से उन्होंने हिन्दी भाषा की आत्मा को आत्मसात करने का प्रयत्न किया होगा।

भाषा के जरा से गलत प्रयोग से अर्थ का अनर्थ होने की सम्भावना रहती है। विशेष कर शास्त्रार्थो में। हिन्दी को उन्होंने ऐसे अपनाया कि नौ वर्ष के अल्पकाल में (सन् 1875 से 1883) वह इतना काम कर गये कि बड़े से बड़ा कार्य हिन्दी में करने लगे। पत्र व्यवहार भी हिन्दी में करने लगे। उनके सभी विज्ञापन हिन्दी में छपते थे। उनके आदेश पर आर्यसमाजों ने पत्र-पत्रिकाऐं हिन्दी में निकालीं, पाठशालायें खोलीं। उन्होंने आर्यसमाज के प्रत्येक सदस्य के लिए हिन्दी पढ़ना-पढ़ाना अनिवार्य कर दिया। वे इस बात को भलीभांति समझ गये थे कि हिन्दी ही देश को एकता के सूत्र में पिरो सकती है। देश उनके लिये सर्वोपरि था। वे मानते थे कि व्यक्ति को बहुभाषाविद् होना चाहिए। 31 जुलाई सन् 1875 में पुणे में इतिहास विषयक अपने बारहवें व्याख्यान में स्पष्ट बताते हैं कि लाक्षागृह का भेद विदुर ने युधिष्ठिर को बर्बर देश की भाषा में बतला दिया था। वह भाषा धर्मराज युधिष्ठिर जानते थे।

प्रश्न उठ सकता है कि स्वामी जी को प्रचलित अर्थो में साहित्य सर्जक या साहित्य निर्माता माना जा सकता है। क्योंकि उनका अधिकतम लेखन अध्यात्म विषयक ही है। जिसे लोग साहित्य की कोटि में नहीं रखते। फिर भी साहित्य के क्षेत्र में स्वामी जी का योगदान मानना ही पड़ेगा। उन्होंने अपनी आत्मकथा में अपनी यात्राओं का इतिहासवृत्तात्मक वर्णन भी किया है। कहीं-कहीं यह वर्णन अत्यन्त रोमांचक और मर्मस्पर्शी है।

व्याख्यान देते समय अपने व्याख्यान को रोचक बनाने के लिये दृष्टांत में वे लघु कथाएं भी सुनाया करते थे। उन्हें आधुनिक लोक कथा का मूल स्त्रोत कहा जा सकता है। प्रत्यक्ष रूप में यह उनकी सृर्जनात्मक उपलब्धि ही है। भाषा और शैली की दृष्टि से भी साहित्य में उनका महत्तवपूर्ण योगदान है। विशेष रूप से इसलिए भी कि तब खड़ी बोली का (हिन्दी का) गद्य का निर्माण की स्थिति में था।

बहुत कम लोग यह जानते हैं कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का सुप्रसिद्ध नाटक अंधेर नगरी कथा की दृष्टि उनकी मौलिक कृति नहीं है। नाटक का प्रकाशन सन् 1881 में हुआ। जबकि स्वामी दयानन्द ने इस कथा का प्रयोग व्यवहारभानु में सन् 1879 में किया। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि स्वामी दयानन्द हिन्दी के पुरोधा थे। हिन्दी गद्य के निर्माण में उनका बहुत महत्तवपूर्ण और सार्थक योगदान रहा।

ऋषि दयानन्द केवल भारतीयों के ही नहीं, समस्त मानव जाति के महान पुरुष थे। स्वराज शब्द का आविष्कार सर्वप्रथम स्वामी दयानन्द ने किया। वे परम ईश्वर भक्त, वेद आग्रही, वेद उद्धारक, महान योगी, उत्कृष्ट देशभक्त थे उनमें राष्ट्रीयता कूट-कूटकर भरी हुई थी। शास्त्रार्थ योद्धा होने के साथ वे महान दार्शनिक भी थे। महर्षि आधुनिक युग के निर्माता थे।

हमें उनके शिष्य होने का गौरव प्राप्त है। ईश्वर हमें सामर्थ्य प्रदान करे कि हम उनके दिखाये मार्ग का अनुसरण कर पायें।

OO

# राष्ट्रीय एकता का सूत्र संस्कृत

- श्रीमती मधु भसीन

**शक्या यथा नु ज्ञातुम उदद्येः गंभीरता**
**नापि हिमालयस्य प्रोन्नतिः मापयितुं शक्यम।**
**न च पुष्पस्य रागतां वर्णयितुं शक्यं**
**तदेव संस्कृतस्य महात्म्यं नाख्यातु शक्यम।।**

**अर्थ :** जिस प्रकार सागर की गहराई, हिमालय की ऊंचाई और पुष्प की सुन्दरता बखानी नहीं जा सकती, उसी प्रकार संस्कृत भाषा की महानता का वर्णन संभव नहीं।

यह सत्य है कि विश्व की अनेक भाषाओं में सबसे मधुर, सरल, रम्य और प्राचीनतम भाषा संस्कृत है। संस्कृत भाषा के अनेक विशिष्ट गुणों में सर्वप्रमुख विशेषता उसकी एकता में है। यहां एकता शब्द का अर्थ प्रत्येक मनुष्य की सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं मानसिक एकता है। संस्कृत में जो एकता अर्जित है, वह सुदृढ़ है ओर विश्व में अप्रतिम है।

प्राचीन काल से ही सदा प्रत्येक मनुष्य के हितार्थ कामना की जाती है-

**'सर्वे भवन्तु सुखिनः**
**सर्वे सन्तु निरामयाः।**
**सर्वे भद्राणि पश्यन्तु**
**मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्।।'**

राष्ट्र की एकता की अपेक्षा करने वाली भावना भी संस्कृत में ही है- 'वसुधैव कुटुम्बकम'

भारत के आदर के लिए यही उपदेश दिया जाता है- 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसीः'

भारतवर्ष के साहित्य की अमूल्य निधि संस्कृत में है। वेद, उपनिषद हमारी भारतीय संस्कृति और सभ्यता के मूल स्तम्भ है। वर्तमान में भी हितोपदेश और पञ्चतन्त्र आदि शिक्षा प्रधान कथायें सर्वत्र पढ़ी और सुनी जाती हैं। इन्हीं कारणों से संस्कृत भाषा राष्ट्र की एकता की प्रतीक कही जाती है। उदाहरणार्थ हमारे सारे राष्ट्रीय ध्येय संस्कृत भाषा में हैं-

| | | |
|---|---|---|
| भारत सरकार | : | सत्यमेव जयते |
| लोकसभा | : | धर्मचक्र प्रवर्तनाय |
| उच्चतम न्यायालय | : | यतः धर्मः ततो जयः |
| गुरुकुल कांगडी वि.वि. | : | ब्रह्मचर्येण तपसा देवा |
| आल इण्डिया रेडियो | : | बहुजन हिताय बहुजन सुखाय |
| दूरदर्शन | : | सत्यम् शिवम् सुन्दरम् |
| थल सेना | : | सेवा अस्माकम धर्मः |
| वायु सेना | : | नमः स्पृशम दीप्तम् |
| जल सेना | : | शं नो वरुणः |
| भारतीय प्रशासनिक सेवा | : | योगः कर्मसु कौसलम् |
| डाक तार विभाग | : | अहर्निशं सेवामहे |
| भारतीय जीवन बीमा निगम | : | योगक्षेमं वहाम्यहम् |
| आर्यसमाज | : | कृण्वन्तो विश्वमार्य इत्यादि। |

संस्कृत भाषा का संरक्षण केवल देश के हित के लिए ही नहीं अपितु हमारी भारतीय राष्ट्रीय संस्कृति की रक्षा और एकता की स्थापना के लिये अत्यावश्यक है।

**'यावत स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले।**
**तावत्संस्कृतं भाषा लोकेषु प्रचरिष्यति।।**
**'जयतु संस्कृतं जयतु संस्कृतवाणी'**

OO

# महात्मा हंसराज जी के प्रेरक पांच सकार

**महात्मा जी** ने आस्तिक, धार्मिक, नैतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय मूल्यों से ओतप्रोत और मानवीय गुणों से युक्त मानव बनने के लिये पांच सकारों का अमर सन्देश दिया है जो आज के जीवन के लिये अत्यन्त प्रेरक, उपयोगी एवं महत्वपूर्ण हैं-

**संध्या :** प्रत्येक मनुष्य का परम कर्त्तव्य है कि वह अपने जीवनदाता, निर्माता, पालक, संचालक, परमेश्वर का प्रातः सांय स्मरण और धन्यवाद करें। जिसने जन्म दिया, उसके प्रति कृतज्ञता एवं धन्यवाद प्रकट करना हमारा प्रथम धर्म व कर्म है। महात्मा जी सदैव लोगों को और विद्यार्थियों को प्रेरित करते थे- आस्तिक और धार्मिक बनो। प्रभु की सत्ता, व्यवस्था, नियम, अनुशासन आदि पर विश्वास करो। संध्या आत्मा का भोजन कहलाती है।

**स्वाध्याय :** श्रेष्ठ, प्रेरक ग्रन्थों का पढना-पढाना, संध्या, स्वाध्याय कहलाता है।. अच्छी पुस्तकें और मित्र औषधि का काम करते हैं। एकान्त और अकेलेपन के उत्तम साधन सद्ग्रन्थ होते हैं। स्वाध्याय से विचार, हृदय और जीवन बतलाता है। तनाव, चिन्ता, अशान्ति, असन्तोष आदि दूर होते हैं। महात्मा जी स्वाध्याय पर विशेष बल देते थे। वे स्वयं स्वाध्यायशील थे।

**सत्संग :** सत्संग की अनन्त महिमा है। आचार-विचार, जीवन परिवर्तन का सत्संग से बढ़कर कोई और प्रेरक साधन नहीं है। ऋषि दयानन्द के व्यक्तित्व का ऐसा चुम्बकीय प्रभाव था कि जो भी संपर्क में आया, बदल गया। महात्मा हंसराज जी, गुरुदत्त जी, पं. लेखराम आदि ने ऋषि को देखा, सुना तो उनके जीवन बदल गये। महात्मा जी सच्चे सत्संग पर जोर देते थे।

**संयम :** संयम जीवन का आधार है। संयम से तन, मन, विचार और आचरण संभला और सुधरा रहता है। महात्मा जी अपने जीवन में संयम के उदाहरण थे।

**सेवा :** महात्मा जी लोगों को सदैव प्रेरणा देते थे, अपने से बड़ों का सम्मान करते रहो। वेद के अनुसार दुनिया में सबसे बड़ा सुख है- दूसरों के काम आना। संसार उन्हीं को याद करता है जो अपना जीवन दूसरों के उपकार में लगा आते हैं। ऐसे व्यक्ति ही अमरपद के अधिकारी बनते हैं। संक्षेप में महात्मा जी ने पांच सकारों के माध्यम से जो जीवन के लिए जो अमूल्य उपदेश, संदेश और चिंतन दिया है, आज उसकी अत्यंत आवश्यकता है। इन्हीं विचारों से जीवन में सच्ची सुख शांति, प्रसन्नता, आनन्द की प्राप्ति संभव है।

# शिष्य की जीवन नैया पार लगाने वाले गुरू बहुत कम है : शास्त्री

बाईस जुलाई को गुरु पूर्णिमा का पर्व पूरे देश में मनाया जाता है। भारतीय अध्यात्म में गुरु का विशेष महत्व है। सच बात तो यह है कि मनुष्य कितने भी आध्यात्मिक ग्रन्थ पढ़ ले जब तक उसे गुरु श्रेष्ठ का सान्ध्यि प्राप्त नहीं होगा तब तक उसे ज्ञान नहीं होगा और कभी भी इस संसार का रहस्य समझ नहीं पायेगा। इसके लिये यह भी शर्त है कि गुरु को त्यागी और निष्कामी होना चाहिए। दूसरी बात यह है कि गुरु भले ही कोई आश्रम आदि न चलाता हो लेकिन वह अपने ज्ञान रूपी अमृत के द्वारा अपने शियों का निर्माण कर सकता है। यह जरूरी नहीं है कि गुरु सन्यासी हो, अगर वह गृहस्थ भी है तो उसमें त्याग का भाव होना चाहिए। त्याग का अर्थ संसार का त्याग नहीं बल्कि अपने स्वाभाविक तथा कर्मो में लिप्त रहते हुए विषयों से आसक्ति से है।

हमारे यहां गुरु शिष्य परंपरा का लाभ पेशेवर धार्मिक प्रवचनकर्ताओ ने खूब उठाया है यह पेशेवर लोग अपने इर्द-गिर्द भीड़ एकत्रित कर उसे तालियां बजबाने के लिए सांसरिक विषयों की खूब बात करते हैं। श्रीमद्भागवत् गीता में वर्णित गुरु सेवा करने के संदेश वह इस तरह प्रसारित करते है। जिससे उनके शिष्य उन पर दान दक्षिणा अधिक से अधिक चढ़ाये। इतना ही नहीं माता-पिता भाई-बहन या रिश्तों को निभाने की कला भी सिखातें है जो कि शुद्ध रुप से सांसरिक विषय है। श्रीमद्भागवत् गीता के अनुसार हर मनुष्य अपना गृहस्थ कर्त्तव्य निभाते हुए अधिक आसानी से परपंरागत हो सकता है। सन्यास अत्यंत कठिन है क्योकि मनुष्य का मन चंचल है इसलिए उसमे विषयों के विचार आते है। अगर संन्यास ले भी लिया तो मन पर नियन्त्रण इतना सहज नहीं है। इसलिए सरलता इसमे है कि गृहस्थी में रात होने पर भी विषयों में आसक्ति न रखते हुए उनसे इतना ही जुड़ा रहना जिससे अपनी देह का पोषण होता रहें। गृहस्थ में माता पिता, भाई बहन तथा अन्य रिश्ते भी होते हैं जिन्हे तत्व ज्ञान होने पर मनुष्य अधिक सहजता से निभाता है। हमारे कथित गुरु जब इस तरह के सांसरिक विषयों पर बोलते है। तो महिलायें बहुत प्रसन्न होती हैं और पेशेवर गुरुओं की आजीविका उनके शिष्यों पर ही चलती हैं समाज के परिवारो के अन्दर की कल्पित कहानियां सुनाकर यह पेशवर गुरु अपने लिए खूब साधन जुटाते हैं। शिष्यों का संग्रह करना ही उनका उद्देश्य होता हैं। यही कारण है कि हमारे देश मे धर्म पर चलने की बात खूब होती है पर देश में व्याप्त भ्रष्टाचार? अपराध तथा शोषण की बढ़ती घातक प्रवृत्ति देखते है तब यह साफ लगता है कि पाखंडी लोग अधिक हैं।

संत कबीर कहते हैं-

**बहुत गुरू हैं जगत में, कोई न लागे तीर।**
**सबै गुरू बहि जाएंगे, जाग्रत गुरू कबीर।।**

इस जगत में कथित रूप से बहुत सारे गुरू हैं पर कोई अपने शिष्य को पार लगाने में सक्षम नहीं है। ऐसे गुरू हमेशा ही सांसारिक विषयों में बह जाते हैं। जिनमें त्याग का भाव है, वही जाग्रत सच्चे गुरू हैं जो शिष्य को पार लगा सकते हैं।

**जाका गुरू है गीरही, गिरही चेला होय।**
**कीच कीच के घोवते, दाग न छूटै कोय।।**

जो गुरू केवल गृहस्थी और सांसारिक विषयों पर बोलते हैं, उनके शिष्य कभी आध्यात्मिक ज्ञान ग्रहण या धारण नहीं कर पाते। जिस तरह कीचड़ को गन्दे पानी से धोने पर दाग साफ नहीं होते उसी तरह विषयों में पारंगत गुरू अपने शिष्य का कभी भला नहीं कर पाते।

सच बात तो यह है कि हमारे देश में अनेक लोग यह जानते हैं पर इसके बावजूद उनको मुक्ति का मार्ग सूझता ही नहीं है। यहां हम एक बात यह भी बता दें कि गुरू का अर्थ यह कदापि नहीं लेना चाहिए कि वह देहधारी हो। जिन गुरूओं ने देह का त्याग कर दिया है वह अब भी उनकी रचनाओं, वचनों का समावेश हमारे वचनों में ही हो जाता है। ज्ञान केवल किसी की शक्ल देखकर नहीं हो जाता। अध्ययन, मनन, चिन्तन और श्रवण की विधि से भी ज्ञान प्राप्त होता है। एकलव्य ने गुरू द्रोणाचार्य का स्मरण कर ही धनुर्विद्या सीखी थी। इसलिये शरीर से गुरू का होना जरूरी नहीं है।

अगर संसार में कोई गुरू नहीं मिलता तो वेद को, परमात्मा को गुरू तथा श्रीमद् भगवद् गीता को योगीराज श्रीकृष्ण को गुरू मानकर किया जा सकता है। हमारे देश में महर्षि कबीर और तुलसी

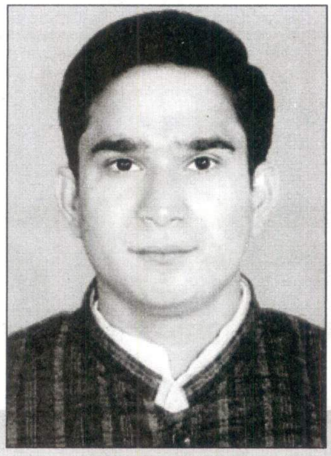

**ओमकार शास्त्री**
**संस्कृत प्रवक्ता, आर्ष गुरुकुल, नोएडा**

**हमारे यहां गुरु शिष्य परंपरा का लाभ पेशेवर धार्मिक प्रवचनकर्ताओं ने खूब लाभ उठाया है यह पेशेवर लोग अपने इर्द-गिर्द भीड़ एकत्रित कर उसे तालियां बजवाने के लिए सांसरिक विषयों की खूब बात करते हैं। श्रीमद्भागवत् गीता में वर्णित गुरु सेवा करने के संदेश वह इस तरह प्रसारित करते है जिससे उनके शिष्य उन पर दान दक्षिण अधिक से अधिक चढ़ाये।**

जैसे महान संत हुए हैं। उन्होंने देह त्याग किया है पर उनका नाम आज भी जीवंत है। जब दक्षिणा देने की बात आये तो जिस गुरू का नाम मन में धारण किया हो उसके नाम पर दान या गुरू दक्षिणा किसी गरीब को दिया जा सकता है। श्रेष्ठ गुरू यही चाहता है कि उसके शिष्य सदैव वेद मार्ग पर चलकर अपने जीवन को श्रेष्ठ बनायें।

आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने गुरू विरजानन्द के द्वारा प्राप्त ज्ञान से समस्त आर्यावर्त्त में वैदिक धर्म की पताका फहराई और विधवा-विवाह, स्त्रियों को शिक्षा का अधिकार, भ्रूणहत्या पर प्रतिबन्ध और आजादी के लिये अथाह परिश्रम किया। हमारे देश में अनेकों उदाहरण मिलते हैं, जिनमें गुरू शिष्य परम्परा की अनूठी छाप दिखाई देती है।

गुरू भक्ति को कबीर दास जी कहते हैं-

**गुरू समान दाता नहीं, याचक शिष्य समान।**
**तीन लोक की सम्पदा सो गुरू देते दान।।**

# राष्ट्र के कर्णधार कौन

आर्यसमाज को युवा शक्ति की अत्यंत आवश्यकता है। आज का युवा दंगा-फसाद, तोड़फोड़, लूटपाट, आगजनी आदि में अपनी शक्ति का अनुचित प्रयोग कर रहा है। आज के इस दिशा- शून्य युवा शक्ति के रुख को मोड़कर यदि आर्यसमाज में प्रविष्ट किया जाय तो आर्य समाज एक क्रांतिकारी के साथ अग्रसर हो सकता है। यह कार्य कोई और नही कर सकता, कर सकतें है तो सिर्फ आर्य समाज के वे कर्तव्य निष्ठ सिपाही जो महर्षि दयानन्द के स्वर्णिम स्वप्नों को भू लोक पर साकार करना चाहते हैं लेकिन इससे पहले हमें संगठित होना बहुत जरुरी है। जब तब हम संगठित होकर, एक जुट होकर साथ नही चलेंगे, तब तक यह कार्य मुश्किल ही नही बल्कि असंभव भी है कुछ समय के लिए ही सही हम अपने आर्य समाज में जाते हैं। अपने समाज को किस तरह आगे बढाना है और इसके लिए क्या कुछ करना होगा ऐसे विषयों पर विचार-विमर्श करें तथा यह संकल्प करें कि आर्य समाज के कार्य के प्रति हमें अथक परिश्रम करना है। प्रत्येक व्यक्ति को यह प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि हम दूसरे व्यक्ति को भी आर्य बनाकर दम लेंगे हम चाहे एक व्यक्ति को ही आर्य समाजी बनायं लेकिन जरुर बनाए। अब समय आ गया है बाहर निकलकर मैदानों, गांवों और दूर- दराज की छोटी-छोटी बस्तियों में जाकर वेदों का प्रचार करें, महर्षि दयानंद के संदेश को जन जन तक पहुँचाएं।

**महर्षि दयानंद के दो प्रिय श्लोक-**

**विद्याविलास मनसो धृति शील शिक्षाः**
**सत्यव्रता रहित मानमलाप हाराः**
**संसार दुखः दलनेन सुभूषितः ये**
**धन्यानराविहीतः कर्म परोप कारा ।।**

**अर्थात** जिनका मन सदा विद्या के विलास में लीन रहता है, जिन्होंने शील और सदाचार की शिक्षा ग्रहण की है, जो सत्यव्रती है, मान अपमान के मल से जो अपने चित को विक्षुब्ध नही होने देते, जो संसार के दुखों का दलन करने से ही स्वयं को सुभूषित समझते हैं और अहर्निस परोपकाार में लगे रहते हैं वे मनुष्य धन्य हैं।

**निन्दन्तु नीति- निपुणा यदि वा स्तुवन्तु**
**लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम**
**अद्येव वा मरणामस्तु युवान्तरे वा ।**
**न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।।**

अर्थात चाहे नीति कुशल लोग निन्दा करें, चाहे स्तुति करें, चाहे लक्ष्मी आये या बिल्कुल छोड़कर चली जाय, चाहे आज ही मृत्यु आ जाय या एक युग के बाद आय परन्तु धीर लोग न्याय के मार्ग से कभी विचिलित नही होते।

आज बड़े दुख की बात है कि आर्य समाज जैसे सत्य वैदिक धर्म का प्रचार प्रसार करने वाली संस्था का प्रभाव निरंतर बढ़ने की जगह घटता जा रहा है। आर्य समाजी कहते है कि देश की ज्वलन्त समस्या का समाधान आर्य समाज के द्वारा ही हो सकता है। राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक उन्नति के लिए आर्य समाज का कार्य जोर शोर से होना चाहिए। ऐसा करना चाहिए, वैसा करना चाहिए यह कहकर हम अपना पल्ला झाड़ लेते हैं, करता-धरता कोई नहीं है। हमारी कथनी और करनी में जमीन आसमान का अंतर आ गया है।

आर्य समाज का कार्य, आर्य समाज करेगा, इतना कहने मात्र से कुछ नहीं हो सकता आर्य समाज तो तब है जब इसमें आर्य वा सभ्य लोग शामिल हैं। ओर जब तक आर्य जन कोई कार्य नही करेंगे तब तक समाज का कार्य नहीं हो सकता। ऊंचाई से नीचे गिरना तो आसान है लेकिन नीचे से ऊपर चढना बहुत कठिन है। आज का आधुनिक युग बहुत आलसी और प्रमादी हो गया है। लोग यह सोचने लगें हैं कि सब कार्य आसानी से हो जाय और लोगों को उसी कार्य में आनंद आता है जो बिना परिश्रम के आसानी से हो जाता है। कठिन वा परिश्रम वाले कार्य को बहुत कम लोग ही कर पाते हैं।

आर्य जन कुछ समय के लिए चार दीवारी में बंद रहकर हवन यज्ञ करने और व्याख्यान देकर यह सोच लेते हैं कि आर्य समाज का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। हमसे कई लोग यह कहते हुए सुने जा सकते हैं कि बच्चों को गुरुकुलों और डी. ए.वी. स्कूलों में प्रवेश करवाने चाहिए, लेकिन अपने बच्चों को बड़े- बड़े अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों मे भर्ती करवाते हैं जहाँ उनके आर्य बनने की जगह अनार्य बनने की संभावना ज्यादा रहती है। यह बड़ी भयंकर भूलें हैं, नासमझी हैं, जिसका दुष्परिणाम हमारी आने वाली पीढी को भुगतना होगा। आर्य समाज के थोड़े से मंदिरों को छोड़कर सभी जगह कुछ गिने-चुने लोग ही आते हैं और थोडी देर समय व्यतीत करके अपने कर्तव्यों की इति श्री समझकर वापस चलें जाते है। इस तरह आर्य समाज कदापि नहीं बढ़ सकता है।

आर्यसमाज को युवा शक्ति की अत्यंत आवश्यकता है। आज का युवा दंगा-फसाद, तोड़फोड़, लूटपाट, आगजनी आदि में अपनी शक्ति का अनुचित प्रयोग कर रहा है। आज के इस दिशा- शून्य युवा शक्ति के रुख को मोड़कर यदि आर्यसमाज में प्रविष्ट किया जाय तो आर्य समाज एक क्रांतिकारी आंदोलन के रूप में अग्रसर हो सकता है। यह कार्य कोई और नहीं कर सकता कर सकतें है तो सिर्फ आर्य समाज के वे कर्तव्य निष्ठ सिपाही जो महर्षि दयानन्द के स्वर्णिम स्वप्नों को भू लोक पर साकार करना चाहते हैं लेकिन इससे पहले हमें संगठित होना बहुत जरुरी है। जब तब हम संगठित होकर, एक जुट होकर साथ नही चलेंगे, तब तक यह कार्य मुश्किल ही नही बल्कि असंभव भी है कुछ समय के लिए ही सही हम अपने आर्य समाज में जाते हैं। ज्यादा से ज्यादा समय हम जरूर लगायें। उस दिन सब आर्य जन साथ बैठकर, अपने समाज को किस तरह आगे बढाना है और इसके लिए क्या कुछ करना होगा ऐसे विषयों पर विचार-विमर्श करें तथा यह

संकल्प करें कि आर्य समाज के कार्यो के प्रति हमें अथक परिश्रम करना है। हममें से प्रत्येक व्यक्ति को यह प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि हम दूसरे व्यक्ति को भी आर्य बनाकर दम लेंगे हम चाहे एक व्यक्ति को ही आर्य समाजी बनाये लेकिन जरूर बनाएं। अब समय आ गया है बाहर निकलकर मैदानों, गांवों और दूर- दराज की छोटी-छोटी बस्तियों में जाकर वेदों का प्रचार करें, महर्षि दयानंद के संदेश को जन जन तक पहुँचाएं। लोगों को यह बताए कि सत्य क्या है, असत्य क्या है? धर्म क्या है, अधर्म क्या है? अनपढ़ और पथभ्रष्ट लोगों को प्रचार द्वारा सत्य सनातन वैदिक धर्म की जानकारी कराए। तभी हम महर्षि दयानन्द सरस्वति के आर्य समाज रूपी महान यज्ञ में आहूति देने के अधिकारी होंगे अन्यथा लानत है, धिक्कार है हम पर कि हम आर्य समाजी होते हुए भी अपनें समाज की अवनती को देखकर चुप्पी साधे हुए हैं, आँखें मूँदकर आराम से पड़े हुए हैं। हमसे बड़ा पापी और कौन हो सकता है जो सत्य वैदिक ज्ञान को जानते हुए भी समझते हुए भी, अंजान बना हुआ है, उसे अपनाने की, अपने जीवन में ढालनें की कोशिश नहीं कर रहा है। ठोकर मार दो उस विलास की वस्तुओं को, तोड़ दो अधर्म की उस जंजीर को जिसने हमें सदियों से अपने पशाचिक पाश में बांधा हुआ है।

सब मनुष्यों को सच्ची इंसानियत सिखाना और भारत को श्रेष्ठ पुरुषों का देश आर्यवर्त बनाना आर्य समाज का उद्देश्य है। संसार में कोई भी दुखी न हो, हर एक की आँख के आँसू पुंछ जाए, कोई किसी से वैर भाव न रखे और सब समान रुप से सुख के भागी बनें यही आर्य समाज का उद्देश्य है।

परन्तु औरों को एकता के सूत्र में बांधने से पहले स्वयं आर्यसमाजियों को भी एकता के सूत्र में बंधना होगा। वेद का आदेश है-

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसी जातान।

हम सब साथ मिलकर चलें, साथ मिलकर बोलें और हम सबके मन समान ज्ञान वाले हों।

'द' केब्स एण्ड जंगल्स ऑफ हिन्दुस्तान 'मे मैडम ब्लैवेटस्की लिखती हैं- यह पूर्ण निश्चय के साथ कहा जा सकता है कि शंकराचार्य के बाद भारत ने दयानन्द से बढ़कर संस्कृत का पंडित नहीं देखा। इतना बड़ा अध्यात्मवेत्ता नहीं देखा। इतना जादू भरा व्याख्याता नहीं देखा और बुराई का खण्डन करने वाला ऐसा निर्भीक योद्धा नहीं देखा। आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थप्रकाश नामक ग्रन्थ की रचना करके मानव जाति का अवर्णनीय उपकर किया है।

महर्षि ने इस ग्रन्थ की भूमिका में लिखा है, सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है। ऋषि दयानन्द की एक बड़ी विशेषता यह थी कि वे प्रत्येक व्यक्ति समाज, देश ही नहीं अपितु सम्पूर्ण संसार के प्राणीमात्र की सर्वतोमुखी उन्नति चाहते थे। वे चाहते थे कि व्यक्ति और समष्टि के शरीर, मन और आत्मा सब स्वस्थ हों। उन्होंने स्वयं इस बात पर बल दिया और बाद में आर्यसमाज ने भी इस बात का ध्यान रखा। इसलिये आर्यसमाज ने धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, नैतिक सभी प्रकार के सुधार को करने का प्रयत्न किया। आर्यसमाज की आधारशिला वेद है। दयानन्द ने वेदों की ओर लोटो का बिगुल बजाया था। हिन्दु जाति वेदों की भक्त थी, उन्हें ईश्वरकृत मानती थी पर वेद है क्या और उसमें है क्या यह न जानती थी। एक विशेष वर्ग के अतिरिक्त न तो उन्हें कोई भी देख सकता था, न सुन सकता था न छू सकता था, पढ़ने की बात अलग रही। स्त्री जाति वेद, यज्ञादि के पास भी न जा सकती थी। अपनी ही संस्कृति की धरोहर को बाहर से मांगना पडे। महर्षि को वेद विदेश से मंगाने पड़े। उन्होंने उसका और उसका द्वार जन साधारण के लिये खोल दिया।आर्यसमाज के प्रचार के कारण आज किसी भी वर्ग का कोई भी व्यक्ति वेद पढ़ सकता है, यज्ञोपवीत पहन सकता है और यज्ञ कर सकता है। आर्य समाज के तीसरे नियम में वेद का पढ़ना, सुनना, सुनाना आर्यो का परम धर्म बताया है।

# अपने प्रभु से

**हे दीनानाथ दयामय!** आर्य भाइयों को शक्ति दो कि वे दयानन्द के मिशन को समझें तथा इस प्रकाश को कदापि न तजें।

**हे प्रभु!** हमें पतित अवस्था से उठा लीजिए। हममें सद्ज्ञान वेद के सेवक व सच्चे ब्राह्मण पैदा कीजिए। हिन्दु जाति व आर्यसमाज में सच्चे ब्राह्मण पैदा हों जो कि देश-देशान्तरों में वेदों के प्रचारक बनें। इस समय आर्य जाति नष्ट हो रही है। आप उपदेश करें ताकि जाति जाग जाए, संगठित हो जाय।

**प्यारे पिता!** आर्यसमाज को वह शक्ति दें कि जिससे वैदिक धर्म ध्वज को संसार में फहरा दे। हे भगवन! हमारी कामनाओं को, मनोरथों को आप ही सफल करने वाले हैं। आप हम पर दया करें।

**हे दीनदयालु प्रभो!** कृपा करो। हमारी दान की प्रणाली ठीक हो। हमारे देश का सुधार हो। अविद्या का नाश और विद्या का प्रकाश हो।

**परमात्मा** ऐसी कृपा करें कि हम उनकी इच्छा में अपनी भलाई समझें।

**ईशोपासना,** सन्ध्या के बिना मनुष्य एक शब्द के समान है।

**परमात्मन!** हमारे अन्दर आत्मिक बल उत्पन्न करो, ताकि हम सच्चे धर्म की ध्वजा को ऊँचा करें।

# परमात्मा कवि है : देवस्य पश्य काव्यम

**- प्रोफेसर प्रताप सिंह**

परमात्मा की एक संज्ञा 'कवि' भी है जैसा यजुर्वेद मंत्र 40-8 कहता है ''कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूः।'' अतः यह असम्भव है कि परमात्मा रूपी कवि की कोई रचना न हो। कवि रचना को काव्य कहते हैं। कवि का अर्थ है-रचना करने वाला क्रान्तिदर्शी। वक्ता, लेखक, चित्रकार, मूर्तिकार, आदि किसी रूप में आपके सामने हो। कुछ भोज पत्र अथवा कागज के पन्ने लिखकर अथवा ब्रुश व रंगों से अपने विचारों को व्यक्त कर जनता के सामने लाने का प्रयास व प्रयत्न करते हैं।

कोई अपनी छैनी हथौड़ी से पीतल, चांदी आदि धातुओं पर अथवा पत्थर पर कुछ उत्कीर्ण कर जाते हैं। सब कलाकार है, रचनाकार हैं, कवि हैं। कवि का क्षेत्र केवल कविता करना ही मान लेना संकार्णता, संकुचितता, तथा सीमित मानसिक परिधि का द्योतक हैं, प्रतीक है। इनसे जीवन नीरस होने की आशंका सदा बनी रहती है। जीवन में सरसता नित नवीनता से आती है। वही रचनाकार, कलाकार, सफल कहलाता है जो अपने हृदय को खोलकर अपने नित नये विचारों को अपनी रचना से पूर्णतया भर दे। कालिदास का अभिज्ञान शाकुन्तलम, शेक्यपियर का जूलियस सीजर संसार में अपनी धाक जमा गये हैं। बाल्मीकि अमर हो गए। ल्यो नोर्द दि विन्सी की 'मोनालीसा' संसार की अमूल्य धरोहर बन गई है। कोणार्क का मन्दिर भारतीय ज्योतिष विद्या की महान गाथा रहा है। अजन्ता एलोरा तथा खजुराहो की गुफाओं की मूर्तियां अपनी अमर कहानी खुद कह रहे हैं। मानव को इन कृतियों को, आश्चर्य से आंखे फाड़ मुंह बाऐं देखते ही बनता है। इस परम कवि परमात्मा का महाकव्य 'वेद' है।

कोई कवि अपने भावों को छन्दोबद्ध कर देता है। ताल व लय में आबद्ध कर देता है। केवल शब्दों के चुनाव का क्रमबद्धता में सजा देना ही सफल कविता नहीं कही जाती है, जब तक वह अपने विचारों को, आत्मा को उसमें नहीं भर देता है, वह काव्य नहीं भर देता है, वह काव्य नहीं कहलाता। गालिब ने क्या सुन्दर कहा है-

**गजल में बन्दिशें, अलफाज ही नहीं हैं काफी गालिब।**
**जिगर का खूं भी चाहिए, कुछ असर के लिए।।**

जिस प्रकार मनुष्य अपने शरीर को उत्तम वस्त्र-आभूषणों से अलंकृत कर अपनी सुन्दरता को निखारता है। इसी प्रकार जब तक रचनाकार अपनी आत्मा के भावों को नहीं भर देता, रचना सफल सुन्दर नहीं होती। परमात्मा की महान रचना अनन्त सृष्टि है। जिसमें परमात्मा स्वयं प्राप्त हो रहा है। यही ईशोपनिषद का प्रथम मंत्र कहता है- ''ईशा वास्यमिदं सर्व यत्किंच जगत्यां जगत'' परमात्मा के तीन ही कर्म हैं-

1. चराचर सृष्टि की रचना, धारण, पालन-पोषण तथा प्रलय करना।

> **''वेद व सृष्टि दोनों रचनाऐं परमात्मा की ही हैं। वेद अजर अमर है, सृष्टि आज मरती है तो कल जन्म लेती है। दोनों परमात्मा के काव्य हैं। ऋग्वेद में कहा है-ओं ऋतं सत्यं च सत्यं चाभीद्धातपसोऽध्यजायत। जितनी भी विद्याएं हैं उन सबका प्रयोग सृष्टि की रचना, पालन तथा प्रलय में होता है। ईश्वर का कर्म है यह सृष्टि, उसका ज्ञान है वेद। इसलिए सभी विद्याएं वेद में ही निहित होने से वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है''**

जीवन में सरसता नित नवीनता से आती है। वही रचनाकार, कलाकार, सफल कहलाता है। जो अपने हृदय को खोलकर अपने नित नये विचारों को अपनी रचना से पूर्णतया फर दे। कालिदास का शाकुन्तलम, शेक्यपियर का जूलियस सीजर संसार में अपनी धाक जमा गये हैं। बाल्मीकि अमर हो गए। ल्यो नोर्द दि विन्सी की 'मोनालीसा' संसार की अमूल्य धरोहर बन गई है। कोणार्क का मन्दिर भारतीय ज्योतिष विद्या की महान गाथा रहा है। अजन्ता अलोरा तथा खजुराहो की गुफाओं की मूर्तियां अपनी अमर कहानी खुद कह रहे हैं। मानव को इन कृतियों को, आश्चर्य से आंखे फाड़ मुंह बाऐं देखते ही बनता है। इस परम कवि परमात्मा का महाकव्य 'वेद' है। कोई कवि अपने भावों को छन्दोबद्ध कर देता है। ताल व लय में आबद्ध कर देता है। केवल शब्दों के चुनाव का क्रमबद्धता में सजा देना ही सफल कविता नहीं कही जाती है, जब तक वह अपने विचारों को, आत्मा को उसमें नहीं भर देता है, वह काव्य नहीं भर देता है, वह काव्य नहीं कहलाता। गालिब ने क्या सुन्दर कहा है- गजल में बन्दिशें, अलफाज ही नहीं हैं काफी गालिब। जिगर का खूं भी चाहिए, कुछ असर के लिए।। जिस प्रकार मनुष्य अपने शरीर को उत्तम वस्त्र-आभूषणों से अलंकृत कर अपनी सुन्दरता को निखारता है। इसी प्रकार जब तक रचनाकार अपनी आत्मा के भावों को नहीं भर देता, रचना सफल सुन्दर नहीं होती। परमात्मा की महान रचना अनन्त सृष्टि है। जिसमें परमात्मा स्वयं प्राप्त हो रहा है। यही ईशोपनिषद का प्रथम मंत्र कहता है- ''ईशा वास्यमिदं सर्व यत्किंच जगत्यां जगत'' परमात्मा के तीन ही कर्म हैं- 1. चराचर सृष्टि की रचना, धारण, पालन पोषण तथा प्रलय करना। 2. मानव सृष्टि के साथ वेद ज्ञान का प्रादुर्भाव मानव के ज्ञान व आचरण हेतु करना। 3. जीवों को उनके कर्मों का फल देना।

2. मानव सृष्टि के साथ वेद ज्ञान का प्रादुर्भाव मानव के ज्ञान व आचरण हेतु करना।

3. जीवों को उनके कर्मों का फल देना। यही तीन मुख्य कर्म परमात्मा के हैं।

इस काव्य कृति, रचना की चर्चा, अथर्व वेद (मंत्र- 1008-31) 'देवस्य पश्य काव्यं न संसार जीर्यति' है। हे मनुष्य तू इस अजर अमर परमात्मा के अजर अमर (काव्यं) रचना वेद को देख जो कभी बूढी नहीं होती, न कभी मरती है परन्तु इसके विपरीत ऋग्वेद मंत्र 10-15-05 पर 'देवस्य पश्य काव्यं महित्वाऽद्य ममार सः ह्यः समान' परमात्मा के महान सामर्थ्य उक्त जगत रूपी काव्य, जगत रूपी रचना कृति को देख जो आज मृत्यु को प्राप्त होती है तो कल जन्म लेती है। उस परमात्मा की अजर अमर रचना वेद है तो दूसरी रचना सृष्टि है जो प्रतिदिन जन्म लेती है मरती है।

आज सभी देखते हैं कि चराचर जगत जीव व सृष्टि में सदा परिवर्तन हो रहा है। विज्ञान कहता है कि जहां पर परिवर्तन है, वह परिवर्तन कभी न कभी तो प्रारम्भ हुआ होगा तथा कभी न कभी समाप्त भी होगा। वह परिवर्तन सब जड़ चेतन जगत में पाया जाता है। परन्तु जैनी इस वैज्ञानिक युग में भी इस संसार को अनादि मानते हैं कि यह सब जड़ चेतन सृष्टि सदा से इसी प्रकार से है तथा बनी रहेगी। यह मान्यता अवैज्ञानिक है।

वेद व सृष्टि दोनों में परस्पर समन्वय है, जो ईश्वरीय ज्ञान शब्द रूप वेद में है, वही ज्ञान इस सृष्टि में भी प्रयोगात्मक रूप अवस्था व स्थिति में विद्यमान है। वेद शब्द रूप है तो सृष्टि अर्थमय है। ज्ञान की दो अवस्थाऐं हैं, सिद्धान्त व प्रयोग समन्वय है। वेद सृष्टि के सिद्धान्त की पुस्तक है तो सृष्टि इस ज्ञान की प्रयोगशाला है।

वेद वा सृष्टि पुस्तक के एक पृष्ठ के समान हैं। जो एक पृष्ठ रूपी वेद में लिखा है, सृष्टि रूपी उसी पृष्ठ के सामने उसका विस्तार वा प्रत्यक्ष है। एक पृष्ठ पर सिद्धान्त लिखा है तो दूसरे पृष्ठ पर प्रयोगात्मक शाला चल रही है। जगत और वेद दोनों का रचयिता परमात्मा है। यह दोनों के समन्वय से जाना जाता है।

दोनों में पूर्ण सामंजस्य है। यह तभी संभव है। जब दोनों का रचयिता एक हो। दो बिन्दुओं को जोड़ने वाली सरलतम न्यूनतम दूरी को 'ऋत' कहते हैं। जो सदा एक ही रहती है। इन दोनों बिन्दुओं को जोड़ने वाली अनेकों वक्र टेड़ी-मेढी रेखाऐं हो सकती हैं। इन सबका अपना-अपना व्यक्तित्व तथा अस्तित्व है, सब 'सत' है। ऋत का अपभ्रंश ही ऋज कहा जाता है, दो बिन्दुओं के बीच यह रस्सी सीधी सरल तथा वक्र भी हो सकती है। इस प्रकार ऋत व सत दोनों ही दो बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखाएं हो सकती हैं। दर्शन ऋत को वेद वा सत को सृष्टि कहता है। वेद व सृष्टि दोनों रचनाऐं परमात्मा की ही हैं। वेद अजर अमर है, सृष्टि आज मरती है तो कल जन्म लेती है। दोनों परमात्मा के काव्य हैं। ऋग्वेद में कहा है-ओं ऋतं सत्यं च सत्यं चाभीद्धातपसोऽध्यजायत।

जितनी भी विद्याएं हैं उन सबका प्रयोग सृष्टि की रचना, पालन तथा प्रलय में होता है। ईश्वर का कर्म है यह सृष्टि, उसका ज्ञान है वेद। इसलिए सभी विद्याएं वेद में ही निहित होने से वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।

# दयानन्द का चिन्तन

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका ऋषि दयानन्द का चिन्तन है।
सरल सुवाच्य पथ प्रदर्शक खोजपूर्ण यह मन्थन है।।

ईश्वर जीव प्रकृति का सुन्दर संक्षिप्त है सार यही।
तीन अनादि सत्ता पर ही, टिका हुआ संसार मही।।

सृष्टि रचना करने वाला, ओउम् ब्रह्म निराकार वही।
देता नहीं दिखाई फिर भी, जग का पालन हार सही।।

इसको पढते ही पाठक का, मन को जाता कुन्दन है।
सरल सुवाच्य पथ प्रदर्शक खोजपूर्ण यह मन्थन है।

वेद विषय और सब सत्य विद्या का अनमोल यह संगम है।
ईश्वर को नित्य बतलाता यह सद् विवेक का उद्गम है।

पन्ना-पन्ना देखा होता सहज ही हृदयंगम है।
करे नाश नास्तिकता पल-पल, दूर करे हर क्षण हर तम।।

जीवन बने सुवासित इससे, ज्ञान मेघ का सिंचन है।
सरल सुवाच्य पथ प्रथदर्शक खोजपूर्ण यह मन्थन है।

वेद की रचना, काल की गणना, इसमें यह समझाया गया।
तत् सत् ब्राह्मण पहले कहकर ईश्वर का गुण गाया गया।।

वरण पुरोहित का करने में पौराणिकों द्वारा अपनाया गया।
ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषदों को यथा समय में गाया गया।

तत् सत् ब्राह्मणो पहले कहकर ईश्वर का गुण गाया गया।।
सायण, महीधर मैक्समूलर भाष्य का इसमें यथोचित खण्डन है।

सरल सुवाच्य पथ प्रथदर्शक खोजपूर्ण यह मन्थन है।।
इसका खण्डन किये करपात्री ने पारिजात वेदार्थ को लाकर।

सूर्य के आगे नहीं टिक सके वे छिपे बादलों में जाकर।।
आदि ग्रन्थ सबका हितकारी आओ सब मिल करें उजागर।

करें इसका प्रचार जगत में गली मुहल्ले गांव शहर।।
हर शंका का समाधान हो जाता करने पर अध्ययन है।
सरल सुवाच्य पथ प्रथदर्शक खोजपूर्ण यह मन्थन है।।

# आर्य समाज का दूसरा नियम...

**ब्रह्मचारी नन्दकिशोर आर्य**

ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर सर्वव्यापक, सर्वान्तिर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, और जो सृष्टि कर्ता है उसी की उपासना करनी योग्य है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने स्वरचित ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास और आर्यसमाज के दूसरे नियम में ईश्वर के अनेक नामों का उल्लेख वेदों के आधार पर किया है, ये सब नाम गौण हैं, ईश्वर का मुख्य नाम 'ओ३म' है।

**उदाहरणार्थ-**

हिरण्यमयेनपात्रेण सत्यस्यापिहपतं मुखम।
योऽसावादियत्ये पुरुषः सोऽसावहम। ओं खं ब्रह्म।।

**यजुः 40: 17।।**

सब मनुष्यों के प्रति ईश्वर उपदेश करता है- हे मनुष्यों! जो मैं यहां हूं वहीं अन्यत्र सूर्य आदि में और जो अन्यत्र सूर्य आदि में हूं वहीं यहां हूं सर्वत्र परिपूर्ण और आकाश के समान व्यापक। मेरे से बड़ा अन्य कोई नहीं है। मैं ही सबसे बड़ा महान हूँ। उनाम लक्षणों वाले पुत्र के समान मेरा प्राणप्रिय अपना नाम ओ३म है।

**सत-चित-आनन्द :** योगी लोग उस सत ब्रह्म को अपने हृदय में देखते हैं, जो सारे विश्व का एकमात्र आसय है, उसी में सम्पूर्ण जगत का लाभ होता है और पुनः उसी से प्रकट होता है। वह सर्वव्यापक सम्पूर्ण प्रजाओं में ओतप्रोत है।

**चित :** जो यज्ञादि कर्म करने वाला मनुष्य सुख की स्थिति से मोक्ष के लिये उद्योग करता हुआ, चित स्वरूप परमात्मा को प्राप्त होता है। उसी को विद्वानों से प्राप्त होता है उसी को विद्वानों से प्राप्त, सदा प्रकाशमय घुलोक से भी अधिक प्रकाशमान सुकर्म फलस्वरूप मोक्ष तक पहुँचाने वाला मार्ग भली प्रकार सूझता है।

**कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः।**
**दृढा चिदारुजे वसु।। ऋग 4.31.2, यजु. 36.5।।**

आनन्दों के बीच में अत्यन्त बढ़ा हुआ सुखस्वरूप विद्यमान पदार्थो में श्रेष्ठतम प्रजा के रक्षक चेतन स्वरूप परमेश्वर अन्नादि पदार्थ से तुमको रक्षित करता है और दुःख नाशक तेरे लिए धनों को देता है।

**आनन्द**

परि विश्वा भुवनान्यायमृतस्य तन्तुं विततं दृशे कम।
यत्र देवा अमृतमानशानाः समाने योनावध्यैरयन्त।।अथर्व. 2.1.5।

सब लोकों में घूमकर सत्य के फैले हुए आनन्ददायक सूत्र को देखने के लिये मैं आया हूं। जिसमें विद्वान अमरत्व को प्राप्त करते हुए समान स्थान में पहुंचते हैं।

**निराकार**

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्यशः।
हिरण्यगर्भ ऽइत्येष मा मा हिंसीदित्येषा यस्मान्न जात इत्येष।। यजु.32.3।।

उक्त मंत्र में बताया गया है जिसका महान यश है, उस परमात्मा की कोई प्रतिमा नहीं है। उसी हिरण्यगर्भ परमात्मा से समस्त जीव उत्पन्न होते हैं। काल के सब अवयव और सब गति उसी तेजस्वी, सर्वव्यापक परमात्मा से प्रकट हो रही है।

**सर्वशक्तिमान**

अग्ने सहस्त्राक्ष शतबूर्द्धञ्छतं ते प्राणाः सहस्त्रं व्यानाः।
त्वं साहस्त्रस्य रायऽईशिषे तस्मै ते विधेम वाजाय स्वाहा।।

अनंत नेत्र तथा असंख्य शिरः शक्ति संपन्न ज्ञान स्वरूप परमेश्वर तेरे पास जिलाने के अनेक उपाय हैं, तथा तेरी मारक शक्तियां अपरि-मित हैं तू अनन्त ऐश्वर्य का स्वामी है। तेरी उस शक्ति का मन, वाणी और कर्म से समादर करें।

**त्वमस्य पारे राजसो व्योमनः स्वभूत्योजा अवसे धृषम्नः।**
**चकृषे भूमिं प्रतिमानमोजसोऽपः स्वः परिभूरेष्या दिवम।।**

ईश्वर इस अन्तरिक्ष और आकाश से भी परे है और अत्यन्त धैर्यशाली तथा अपने प्रभाव से बलयुक्त है। वही सबकी रक्षा करता है। सबसे अधिक शक्तिशाली है।

**न्यायकारी**

शंन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा।
शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः।।

सबके साथ प्रेम करने वाला, सब से श्रेष्ठ, सर्वव्यापक, न्यायकारी, परम ऐश्वर्यवान विश्वास का अधिपति, और विशेष क्रम से कार्य करने वालो ईश्वर सबका कल्याण करे। प्रमेश्वर ही सबका राजा और सब धर्मो का श्रेष्ठ अध्यक्ष है। अर्थात यथाकर्म सब को फल देता है। और सबकी प्रार्थनाएं सुनता है। इसीलिए उसकी प्रार्थना करनी चाहिए।

**दयालु**

यो मृळयाति चक्रुषे चिदागो वयं स्याम वरुणे अनागाः।
अनु व्रतान्यदितेर्ऋधन्तो यूयं ात स्वस्तिभिः सदा नः।।

अर्थात जो परमात्मा अपराधी पुरुषों को सुखी करता है उसके निकट हम सदैव निरपराध होवें। उस अखंड ईश्वर के व्रतों का आनुपूर्वी निर्वाह करें, हे विद्वानों! आप सदैव कल्याणों से युक्त करें।

**यन्नूनमश्यां गतिं मित्रस्य यायां पथा।**
**अस्य प्रियस्य शर्मण्यहिंसानस्य सश्चिरे।।**

परमेश्वर दण्ड देता है, किन्तु हिंसा के भाव से नहीं, अपितु कल्याण की भावना से। कल्याण चाहने वालों को दयालु प्रभु के बताए मार्ग पर चलना चाहिए।

**अनन्त**

अनन्तं विततं पुरुत्रानन्तमन्तवच्चा समन्ते।
ते नाकपालश्चरति विचिन्वन्विद्वान्भूतमुत भव्यमस्य।।

अंत वाले अर्थात मर्यादा से युक्त जगत के अन्दर अनन्त अर्थात मर्यादा रहित परमात्मा फैला हुआ है। अनन्त और सान्त एक दूसरे के साथ मिले जुले हैं। इसके विवेक को जानने वाला जो ज्ञानी होता है, वही आगे उन्नति करता है। परमेश्वर के बल का अन्त कोई भी प्राप्त

नहीं कर सकता। वह द्युलोक और पृवी से बहुत बड़ा है। उसकी रक्षा में रहने से कभी भी नाश नहीं होगा।

**निर्विकार**

अदितिर्न उरुष्यत्वदितिः शर्म यच्छतु। माता मित्रस्य रेवतो-
ऽर्यम्णो वरुणस्य चानेहसो व ऊतयः सु ऊतयो व ऊतयः।।

निर्विकार परमात्मा हमें उन्नत करे। निर्विकार जगदीश्वर हमें कल्याण तथा सुख प्रदान करे। वह परमात्मा सबसे स्नेह करने वाले धनीका और न्यायकारी राजा का मान करने वाला है। हे विद्वानों! तुम्हारे लिए उसकी पाप रहित रक्षाएं होवें तथा तुम्हारे लिए उसकी अच्छे प्रकार से अर्थसाधिका हों।

परमेश्वर ही सब सम्पत्तियों का दाता है, वही हमारे कुकर्मो का दण्ड देकर हमें निर्दोष कर सकता है।

**अनादि**

अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसी।
युधेदा पत्वमिच्छसे।।

हे परेश्वर! तु शत्रु रहित है, अथवा किसी का शत्रु नहीं है बन्धु रहित है अथवा किसी का बन्धु नहीं है, तेरा कोई नेता नहीं है, तेरा कोई सेवक नहीं है अर्थात तू स्वकार्य में दूसरों की सहायता की अपेक्षा से रहित अनादि है उद्योग से ही तू बन्धुता को स्वीकार करता है।

**अनुपम**

प्र तुविद्युम्नस्य स्थविरस्य घृष्वेर्दिवो ररप्से महिमा पृथिव्याः।
नास्य शत्रुर्न प्रतिमानमस्ति न प्रतिष्ठिः पुरुमायस्य सह्यो।।

अत्यन्त तेजस्वी, स्थिर और दुष्टता को पीसने वाले ईश्वर की महिमा फैली हुई है इस ईश्वर का कोई शत्रु नहीं न इसकि कोई प्रतिमा है अनन्त ज्ञान वाले और अनन्त शक्तिवाले बलवान ईश्वर को छोड़कर और कोई आश्रय नहीं है, अर्थात वही सबका आश्रय है। परमेश्वर के समान कोई भी बलवान नहीं है इसीलिए उसकी सब प्रार्थना करते हैं।

**सर्वाधार**

त्रयस्त्रिंशद्देवतास्त्रीणि च वीर्याणि प्रियायमाणा जुगुपु-रप्स्वन्तः।
अस्मिंश्चन्द्रे अधि यद्धिरण्यं तेनायं कृणवद् वीर्याणि।।

ईश्वर भक्ति से मनुष्य संसार की समस्त शक्तियों का स्वामी सा हो जाता है। और वह प्रतिदिन यह सोचने लगता है, कि मेरा आधार वही परमात्मा है।

**सर्वेश्वर**

त्वमीशिषे सुतानमिन्द्र त्वमसुतानाम। त्वं राजं राजानाम।।

हे जगदीश्वर! तू उत्पन्न पदार्थो का ईश्वर है और नित्र जीव और प्रकृति का, अथवा आगे उत्पन्न होने वालों का भी ईश्वर है। तू ही लोकों का राजा है।

प्रत्येक वस्तु का स्वामी परमेश्वर ही है। पंचों में परमेश्वर इस लोकोक्ति का मूल इन्द्रः मेधिराणां प्रतीक है।

**सर्वव्यापक**

इदं विष्णुर्वि चक्रमे त्रेधो नि दधे पदम। समलहमस्य पांसुरे।।

सर्वव्यापक परमेश्वर का पराक्रम सर्वत्र जगत में हो रहा है। स्थूल सूक्ष्म और कारण स्वरूप त्रिविध स्थान में उसके पद हैं, अर्थात उनके कार्य चल रहे हैं। और प्रकृति परमाणुओं में जो कार्य हो रहा है वह सब उनाम सुनियमों से चल रहा है। किसी स्थान भी उसका हीन नहीं है।

**सर्वान्तर्यामी**

अतो विश्वान्यद्भुता चिकित्वां अभि पश्यति।

**सत-चित-आनन्द** : योगी लोग उस सत ब्रह्म को अपने हृदय में देखते हैं, जो सारे विश्व का एकमात्र आशय है, उसी में सम्पूर्ण जगत का लाभ होता है और पुनः उसी से प्रकट होता है। वह सर्वव्यापक सम्पूर्ण प्रजाओं में ओतप्रोत है। **चित** : जो यज्ञादि कर्म करने वाला मनुष्य सुख की स्थिति से मोक्ष के लिये उद्योग करता हुआ, चित स्वरूप परमात्मा को प्राप्त होता है। उसी को विद्वानों से प्राप्त होता है उसी को विद्वानों से प्राप्त, सदा प्रकाशमय घुलोक से भी अधिक प्रकाशमान सुकर्म फलस्वरूप मोक्ष तक पहुँचाने वाला मार्ग भली प्रकार सूझता है।

**कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः।**
**दृढा चिदारुजे वसु।। ऋग 4.31.2, यजु. 36.5।।**

आनन्दों के बीच में अत्यन्त बढ़ा हुआ सुखस्वरूप विद्यमान पदार्थों में श्रेष्ठतम प्रजा के रक्षक चेतन स्वरूप परमेश्वर अन्नादि पदार्थ से तुमको रक्षित करता है और दुःख नाशक तेरे लिए धनों को देता है।

**आनन्द** : परि विश्वा भुवनान्यायमृतस्य तन्तुं विततं दृशे कम।
यत्र देवा अमृतमानशानाः समाने योनावध्यैरयन्त।।अथर्व. 2.1.5।
सब लोकों में घूमकर सत्य के फैले हुए आनन्ददायक सूत्र को देखने के लिये मैं आया हूं। जिसमें विद्वान अमरत्व को प्राप्त करते हुए समान स्थान में पहुंचते हैं।

**निराकार : न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्यशः।**
**हिरण्यगर्भ ऽइत्येष मा मा हिंसीदित्येषा यस्मान्न जात इत्येष।।**
**यजु.32.3**।। उक्त मंत्र में बताया गया है जिसका महान यश है, उस परमात्मा की कोई प्रतिमा नहीं है। उसी हिरण्यगर्भ परमात्मा से समस्त जीव उत्पन्न होते हैं। काल के सब अवयव और सब गति उसी तेजस्वी, सर्वव्यापक परमात्मा से प्रकट हो रही है।

**सर्वशक्तिमान : अग्ने सहस्त्राक्ष शतमूर्द्धञ्छतं ते प्राणाः सहस्त्रं व्यानाः। त्वं साहस्त्रस्य रायऽईशिषे तस्मै ते विधेम वाजाय स्वाहा।।**
अनंत नेत्र तथा असंख्य शिरः शक्ति संपन्न ज्ञान स्वरूप परमेश्वर तेरे पास जिलाने के अनेक उपाय हैं, तथा ही तरी मारक शक्तियां अपरिमित हैं तू अनन्त ऐश्वर्य का स्वामी है। तेरी उस शक्ति का मन, वाणी और कर्म से समादर करें।

**त्वमस्य पारे रजसो व्योमनः स्वभूत्योजा अवसे धृषन्मः।**
**चकृषे भूमिं प्रतिमानमोजसोऽपः स्वः परिभूरेष्या दिवम।।**

ईश्वर इस अन्तरिक्ष और आकाश से भी परे है और अत्यन्त धैर्यशाली तथा अपने प्रभाव से बलयुक्त है। वही सबकी रक्षा करता है। सबसे अधिक शक्तिशाली है।

**न्यायकारी : शंन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्यमा।**
**शन्नऽइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः।।**

सबके साथ प्रेम करने वाला, सब से श्रेष्ठ, सर्वव्यापक, न्यायकारी, परम ऐश्वर्यवान विश्वास का अधिपति, और विशेष क्रम से कार्य करने वालो ईश्वर सबका कल्याण करे। प्रमेश्वर ही सबका राजा और सब धर्मो का श्रेष्ठ अध्यक्ष है। अर्थात यथाकर्म सब को फल देता है। और सबकी प्रार्थनाएं सुनता है। इसीलिए उसकी प्रार्थना करनी चाहिए।

कृतानि या च कर्त्वा।।

यहां से वह चेतनावान सब अद्भुतों पर सीधी दृष्टि डालता है। जो अद्भुत किये गये हैं और जिनके करने की इच्छा बन चुकी है।

**अजर**

इन्द्रमेव धिषणा सातये धद् बृहन्तमृष्वमजरं युवानम।

अषाळहेन शवसा शूशुवांसं सद्यश्चिद्यो वावृधे असामि।।

परमेश्वर कभी भी वृद्ध नही होता, वह सदा युवा रहता है। बुद्धि द्वारा, तथा कर्म द्वारा भक्ति पूजा करके विपुल वृद्धि प्राप्त करनी चाहिए।

**अमर**

अहमिन्दो न परा जिग्य इद्धनं न मृत्यवेऽव तस्थे कदा चन।

सोममिन्मा सुन्वन्तो याचता वसु न मे पूरवः सख्ये रिसाथन।।

मैं ऐश्वर्य सम्पन्न, सर्वप्रकाशक की भी पराजय को प्राप्त नहीं होता और न ही कभी मृत्यु को प्राप्त होता हूं अर्थात अमर हूं। धनादि ऐश्वर्य का दाता मैं ही हूं, धनादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए यत्न करते हुए तुम विज्ञानादि धन को मुझ ईश्वर से ही मांगो। इस मंत्र से ईश्वर का अमरपन तथा विज्ञानादिधनदातृत्व स्पष्ट उपष्टि है।

**अभय**

स्वस्तिधा विशां पतिर्वृहा विमृधो वशी।

वृषेन्द्रः पुर एतु नः सोमपा अभयङ्करः।।

कल्याण देने वाला, प्रजापति अज्ञान निवारक दुष्टों को वश में रखने वाला, सुख की वृद्धि करनेवाला, संसार का रक्षक, निर्भय करने वाला, किसी से भय न करने वाला अभय परमात्मा हमारे समक्ष रहे।

**नित्य**

भोग्यो भवदथो अन्नमदद् बहु।

यो देवामुत्तरावन्तमुपासातै सनातनम।।

जो अनेक उत्तम गुणयुक्त सनातन ब्रह्म की उपासना करता है, वह भोग्यशील होता है, और परमात्मा की दया से अनेक भोग्य प्राप्त कराता है।

सनातनमेनमाहुरुताद्य स्यात्पुनर्णवः। अहोरात्रे प्र जायेते अन्यो अन्यस्य रूपयोः।।

विद्वान लोग इस परमात्मा को सनातन कहते हैं, किन्तु वर्तमान में वह नया भी रहता है अर्थात सनातन होते हूए भी सदा युवा रहता है। दिन और रात सृष्टि और प्रलय, एक दूसरे की अपेक्षा से होते रहते हैं।

**पवित्र**

एतो न्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना।

शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्ध आशीर्वान्ममत्तु।।

परमेश्वर सर्वथा दोष रहित, और पवित्र है, पवित्र वेदमंत्रों, तथा पुनीत वाक्यों द्वारा उसकी स्तुति करनी चाहिए।

हे परमात्मन! पवित्र रक्षाओं के द्वारा शोधक स्वयं पवित्र तू हमें सर्वथा प्राप्त हो तू शुद्ध धन देता है और पवित्र तथा सोम्य तू हम सबको आनन्दित कर देता है।

**सृष्टिकर्ता**

य इमे द्यावापृथ्सिवी जनित्री रूपैरपिंशद्भुवनानि विश्वा।

तमद्य होतारिषितो यजीयान्देवं त्वष्टरमिह यक्षि विद्वान।।

जो इस द्युलोक और पृथ्वी लोक को उत्पन्न करता है, सम्पूर्ण लोकलोकान्तारों को तद्रूप से युक्त करता है। हे होता! तू आज इस रहस्य को जानता हूआ विज्ञान युक्त हाकर अत्यन्त यजन शील होता हुआ उस कमनीय सृष्टि करता की इस स्थान में भली प्रकार पूजा कर।

**उपासना :** महर्षि दयानंद सरस्वति ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में उपासना के विषय में सुन्दर विचार दिया है- भूयानरात्यः सच्यः पतिस्त्वमिन्द्रसी विभूः। प्रभूरिति त्वोपास्यमहे वयम।।

हे जगदीश्वर आप सब प्रजा, बुद्धि वाणी और कर्म इन तीनों के पति हैं तथा सर्वशक्तिमान आदि विशेषणों से युक्त हैं। जिससे आप दुष्ट प्रजा मिथ्या रुप वाणी और कर्मो का विनाश करने में अत्यंत सामर्थ है तथा आप को सब में व्यापक और सब सामर्थ वाले जानके हम लोग आपकी उपासना करते हैं।

**युजन्ति ब्रध्ममरुषं चरंतंपरि तस्थुषा। रोचन्ते रोचनादिभि।**

मुक्ति का उत्तम साधन उपासना है इसीलिए जो विद्वान लोग हैं, वे सब जगत और मनुष्यों के हृदय में व्याप्त ईश्वर की उपासना रीती से अपने आत्मा के साथ युक्त करते हैं। वह ईश्वर कैसा है? सबका जानने वाला है, दोष रहित, सब कृपा का समुद्र, सब आनंदों का बढ़ाने वाला सब रीती से बड़ा है। इसी से उपासकों की आत्मा सब अविद्या आदि दोषों से अन्धकार से छूट के आत्मा को प्रकाशित करने वाले परमेश्वर में प्रकाशमय होकर प्रकाशित रहते हैं।

**महर्षि दयानंद सरस्वति ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में उपासना के विषय में सुन्दर विचार दिया है-**

**भूयानरात्यः सच्यः पतिस्त्वमिन्द्रसी विभूः। प्रभूरिति त्वोपास्यमहे वयम।।**

हे जगदीश्वर आप सब प्रजा, बुद्धि वाणी और कर्म इन तीनों के पति हैं तथा सर्वशक्तिमान आदि विशेषणों से युक्त हैं। जिससे आप दुष्ट प्रजा मिथ्या रुप वाणी और कर्मो का विनाश करने में अत्यंत सामर्थ है तथा आप को सब में व्यापक और सब सामर्थ वाले जानके हम लोग आपकी उपासना करते हैं।

**युजन्ति ब्रध्ममरुषं चरंतंपरि तस्थुषा। रोचन्ते रोचनादिभि।**

मुक्ति का उत्तम साधन उपासना है इसीलिए जो विद्वान लोग हैं, वे सब जगत और मनुष्यों के हृदय में व्याप्त ईश्वर की उपाना रीती से अपने आत्मा के साथ युक्त करते हैं। वह ईश्वर कैसा है? कि सबका जानने वाला है दोष रहित सब कृपा का समुद्र सब आनंदों का बढ़ाने वाला सब रीती से बड़ा है। इसी से उपासकों की आत्मा सब अविद्या आदि दोषों से अन्धकार से छूट के आत्मा को प्रकाशित करने वाले परमेश्वर में प्रकाशमय होकर प्रकाशित रहते हैं।

# स्वास्थ्य : स्वस्थ जीवन के लिए क्या छोड़ें क्या अपनाएं

| | छोड़े | | अपनाएं |
|---|---|---|---|
| 1. | सफेद चीनी | 1. | गुड़, शहद |
| 2. | मैदा या बारीक आटा | 2. | मोटा आटा, दलिया अंकुरित गेहूं |
| 3. | पालिश किये चावल | 3. | हाथ कुटे चावल |
| 4. | तली हुई सब्जियां | 4. | कच्ची तथा उबली सब्जियां |
| 5. | चाय, काफी | 5. | तुलसी, सौंफ, चोकर, की चाय, सूप |
| 6. | पान, गुटका | 6. | सौंफ, इलायची |
| 7. | सुपारी | 7. | सुखा आंवला |
| 8. | अचार | 8. | ताजी चटनी |
| 9. | मिठाई | 9. | खजूर, किसमिश, मीठे फल |
| 10. | लाल मिर्च | 10. | काली, हरी मिर्च |
| 11. | साफ्ट ड्रिंक, डिब्बा बंद पेय | 11. | नींबू-शहद पानी नारियल पानी, रसाहार |
| 12. | मांसाहार | 12. | शाकाहार |
| 13. | अधिक भोजन | 13. | कम भोजन |
| 14. | नमक का प्रयोग | 14. | केवल उबली हुई सब्जियों में |
| 15. | पक्वाहार | 15. | अपक्वाहार |
| 16. | गरिष्ठ भोजन | 16. | सुपाच्य भोजन |
| 17. | प्रातः की चाय | 17. | जल सेवन (तांबे के बर्तन में रखा) |
| 18. | फास्ट फूड | 18. | फलाहार |
| 19. | चोकर बिना आटा | 19. | चोकर समेत आटा |
| 20. | मांड निकला चावल | 20. | मांड सहित चावल |
| 21. | देर रात्रि भोजन | 21. | सोने से तीन घंटे पूर्व भोजन |
| 22. | बिना भूख खाना | 22. | बिना भूख नहीं खाना |
| 23. | आलस्य | 23. | परिश्रम |
| 24. | थकावट | 24. | विश्राम |
| 25. | नकारात्मक नजरिया | 25. | सकारात्मक नजरिया |
| 26. | अधिक विषय भोग | 26. | संयम का नियम |
| 27. | एअर टाईट वस्त्र | 27. | सूती अथवा हवादार वस्त्र |
| 28. | टूथ पेस्ट | 28. | नीम की दातून |

# महानता के स्तम्भ : महात्मा हंसराज

**महात्मा श्री अमर स्वामी सरस्वती**

आर्यसमाज के तपोधन पूज्य महात्मा हंसराज जी का जन्म दिवस 19 अप्रैल को सारे देश में समारोहपूर्वक मनाया जाता है।

मैं जब उनके महान व्यक्तित्व के संबंध में अपनी स्मृतियों को ताजा करता हूं तो बड़े आश्चर्य मिश्रित गौरव का अनुभव करता हूं कि मुझे भी लगातार 20 वर्ष तक उनके चरणों में बैठकर आर्यसमाज की सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मानवीय स्वभाव की इतनी ऊंचाई व श्रेष्ठता मैंने अंयत्र कहीं नहीं देखी।

मैंने अत्यंत निकट से उनके सभी रूपों को देखा। 20 वर्षों में केवल एक बार क्रोध से लाल उनकी आंखों को देखा। हमारे एक माननीय पंडित जी ने सनातन धर्म के एक वितण्डावादी शास्त्रार्थकर्ता की हेत्वाभासी युक्तियों के जाल में फंसकर महान महर्षि के कागज पर बने चित्र कर जूता मार दिया था। महात्मा जी ने जब समाचार सुना तो क्रोध से भरकर बोले वहां कोई आर्यसमाजी नहीं था जो उसकी बूथी (जबड़ा) तोड़ देता। दूसरी बार मैंने उनको आंसू बहाते देखा। जब स्वामी श्रद्धानंद जी के बलिदान का समाचार उन्होंने सुना तो शोकाकुल होकर रो उठे। ऐसा था उनका उच्च मानवीय स्वभाव।

सामान्यतया सदा ही मैंने उनके अंदर सागर की सी गहराई देखी। उनके विरोधी प्रायः बड़े ही कड़वे शब्दों में उनको पत्र लिखते थे। जब पत्र उनके पास आते तो वे क्रोधित होने के बजाय मुस्कुरा देते थे और उनका उत्तर कभी नहीं देते थे। ना ही इसका कोई बुरा मानते थे। बीस वर्ष में मैंने उनके मुख से कोई बात झूठी या निरर्थक नहीं सुनी।

एक विशेषता उनमें देखी कि जिस बात को वे मुख से कहकर बताना नहीं चाहते थे, मौन हो जाते थे परंतु झूठ कभी नहीं बोलते थे। मैंने एक बार एक बात पूछी तो हंसकर बोले : पंडितजी यह बात मत पूछिए यह मैं नहीं बताऊंगा। औरों की भांति यह भी कहा जा सकता था कि यह बात ऐसी नहीं है, परंतु असत्य का सहारा कभी नहीं लिया और सत्य का दामन कभी नहीं छोड़ा।

कलकत्ता कांग्रेस में लाल लाजपत राय जी अध्यक्ष थे। जब से वहां से लौटकर लाहौर आये तो जिन स्कूल, कालेजों की स्थापना में उन्होंने जीवन के अनमोल समय का सदुपयोग कर शिक्षा जगत् में क्रांति उत्पन्न कर दी थी उसी के संबंध में उनके विचार सर्वथा बदल गये थे। फलतः उन्होंने महात्मा गांधी की इस घोषणा के समर्थन में कि कुछ वर्षो के लिए स्कूल व कालेज बंद कर दिये जाएं, अपनी सम्मति बदल डाली। इससे पहले लालाजी गांधीजी के उक्त विचारों के विरोधी थे। कलकत्ता कांग्रेस से लौटकर उन्होंने तत्कालीन समाचार पत्रों में एक वक्तत्व दिया जिसमें लिखा था कि महात्मा हंसराज जी को डीएवी कालेज बंद कर देना चाहिए।

इस वक्तव्य का प्रभाव स्वभावतः कालेज के विद्यार्थियों पर बहुत हुआ। सारे पंजाब में खलबली मच गई कि डीएवी कालेज का अब क्या बनेगा? इस पर एक वक्तव्य द्वारा महात्मा हंसराज जी ने अपना स्पष्टीकरण किया जिसमें लिखा- 'श्री लाला लाजपत राय डीएवी कालेज के केवल संस्थापक ही नहीं वे उसके संचालक भी रहे हैं। मेरे व लाला जी के बड़े घनिष्ठ संबंध हैं। वे हर एक बात मुझसे कह सकते हैं और मैं उनसे कह सकता हूं। लाला जी के घर से मेरे घर का पांच मिनट का मार्ग है परंतु उन्होंने मुझसे बात न करके समाचार पत्रों में वक्तव्य प्रकाशित किया है।

वे कभी भी मुझे बुला सकते थे और कभी भी मेरे पास तक आ सकते थे। परंतु उन्होंने मुझसे बात न करके समाचार पत्रों में वक्तव्य प्रकाशित करना ठीक समझा। इसका मुझे आश्चर्य है। मुझे यह व्यवहार समझ में नहीं आया। साथ ही यह बात है कि मैं न तो कालेज का प्रिंसिपल हूं और न ही मैं डीएवी

**महात्मा हंसराज जी का जन्म दिवस 19 अप्रैल को सारे देश में समारोहपूर्वक मनाया जाता है। मैं जब उनके महान व्यक्तित्व के संबंध में अपनी स्मृतियों को ताजा करता हूं तो बड़े आश्चर्य मिश्रित गौरव का अनुभव करता हूं कि मुझे भी लगातार 20 वर्ष तक उनके चरणों में बैठकर आर्यसमाज की सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मानवीय स्वभाव की इतनी ऊंचाई व श्रेष्ठता मैंने अंयत्र कहीं नहीं देखी। मैंने अत्यंत निकट से उनके सभी रूपों को देखा। 20 वर्षों में केवल एक बार क्रोध से लाल उनकी आंखों को देखा। हमारे एक माननीय पंडित जी ने सनातन धर्म के एक वितण्डावादी शास्त्रार्थकर्ता की हेत्वाभासी युक्तियों के जाल में फंसकर महान महर्षि के कागज पर बने चित्र कर जूता मार दिया था। महात्मा जी ने जब समाचार सुना तो क्रोध से भरकर बोले वहां कोई आर्यसमाजी नहीं था जो उसकी बूथी (जबड़ा) तोड़ देता। दूसरी बार मैंने उनको आंसू बहाते देखा। जब स्वामी श्रद्धानंद जी के बलिदान का समाचार उन्होंने सुना तो शोकाकुल होकर रो उठे। ऐसा था उनका उच्च मानवीय स्वभाव। सामान्यतया सदा ही मैंने उनके अंदर सागर की सी गहराई देखी। उनके विरोधी प्रायः बड़े ही कड़वे शब्दों में उनको पत्र लिखते थे। जब पत्र उनके पास आते तो वे क्रोधित होने के बजाय मुस्कुरा देते थे और उनका उत्तर कभी नहीं देते थे।**

कालेज कमेटी का प्रधान हूं। मैं तो एक सामान्य सदस्य हूं। कालेज को बंद करने या न करने का अधिकार मुझे कैसे है यह लाला जी ही अधिक जानते हैं। मैं तो केवल अपने अधिकारों को ही जानता हूं, क्योंकि मैं कमेटी का एक साधारण सदस्य मात्र हूं। श्री लाला साईंदास जी डीएवी कालेज के प्रिंसिपल हैं। कालेज के बारे में वे ही श्री प्रधान जी की सम्मति से कुछ कह या कर सकते हैं। ''इसके पश्चात् दूसरे दिन लाला साईंदास का भी एक वक्तव्य समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ जो इस प्रकार था- मैं अपने कालेज में तीन प्रकार के विद्यार्थी देखता हूं।

एक वे हैं जो यूनिवर्सिटी शिक्षा के विद्यार्थी हैं। दूसरे वे हैं जो यूनिवर्सिटी से संबंध न रखते हुए शिक्षा लेना चाहते हैं। तीसरे वे विद्यार्थी हैं जो इस समय दोनों ही प्रकार की शिक्षा न लेकर केवल कांग्रेस का ही काम करना चाहते हैं। तीनों प्रकार के विद्यार्थियों के लिए कालेज की ओर से कोई रुकावट नहीं है। जो यूनिवर्सिटी की शिक्षा लेना चाहते हैं वे ले ही रहे हैं। उनके लिए कालेज को बंद करना उनके साथ अन्याय करना है। दूसरे वे विद्यार्थी हैं जो यूनिवर्सिटी की शिक्षा नहीं लेना चाहते स्वतंत्र रूप से पढ़ना चाहते हैं। उनके लिए मैं घोषणा करता हूं कि ऐसे 100 विद्यार्थी अपने माता-पिता से लिखवाकर दे देवें तो डीएवी कालेज कमेटी एक नान यूनिवर्सिटी कालेज उनके लिए खोल देगी।

तीसरे विद्यार्थी वे हैं जो कांग्रेस आंदोलन में भाग लेना चाहते हैं और आवश्यकता पड़ने पर जेल जाने को भी तैयार हैं। उनके लिए भी द्वार खुला है। वे जब चाहे कालेज छोड़ सकते हैं और जब फिर कभी वे कालेज में आना चाहेंगे तो उनके लिए कालेज का द्वार खुला है। उनके लिए केवल इस कारण से कोई बाधा नहीं होगी कि वे कांग्रेस में क्यों गये थे? वे जब चाहें कालेज में अपना प्रवेश प्राप्त कर सकते हैं।" इसके पश्चात् कालेज में एक दिन भी कोई हलचल नहीं हुई। न ही एक दिन के लिए भी कालेज बंद हुआ।

लाहौर में नान यूनिवर्सिटी ''नेशनल कालेज" भी खुला, तिलक स्कूल ऑफ पोलिटिक्स भी खुला। अब तो लाहौर पाकिस्तान में चला गया परंतु ये दोनों संस्थाएं बहुत पहले ही बंद हो गई थीं। जिनका कहीं कोई नामोनिशान भी शेष नहीं रहा, परंतु डीएवी संस्था आज तक जीवित है। दिन पर दिन उन्नति के नये-नये कीर्तिमान स्थापित कर रही है। नान यूनिवर्सिटी नेशनल कालेज के प्रिंसिपल लाल छबीलदास जी एम.ए. बनाए गए थे जो गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य प्रो. रामदेव जी के जामाता थे। तिलक स्कूल ऑफ पोलिटिक्स के प्रिंसिपल देवतास्वरूप भाई परमानंद जी नियुक्त हुए थे। दोनों संस्थाएं शीघ्र ही समाप्त हो गईं। कारण स्पष्ट है कि राजनैतिक आंदोलन एक सामाजिक भावावेश होता है जबकि डीएवी का आधार महर्षि की शाश्वत विचारधारा है।

इसके साथ ही एक महत्वपूर्ण अनुभव यह है कि माननीय लाला लाजपत राय जी के पूज्य पिता श्री राधाकिशन जी के नाम पर जगरावाँ में एक हाईस्कूल था जिसका संबंध यूनिवर्सिटी से था। लाला जी के विचारों से प्रभावित हाईस्कूल के अधिकारियों ने यूनिवर्सिटी से संबंध विच्छेद कर लिया। फलतः हाईस्कूल ही बंद हो गया।

इसके अधिकारियों को यूनिवर्सिटी से संबंध बनाना पड़ा तब स्कूल चल सका। मेरे हृदय पर महात्मा हंसराज जी की दृढ़ता, दूरदर्शिता, विनम्रता, शालीनता, पूर्ण सेवा के दिव्य गुणों का ऐसा प्रभाव पड़ा जैसा आज तक किसी नेता का नहीं पड़ा।

**लाहौर में नान यूनिवर्सिटी ''नेशनल कालेज'' भी खुला, तिलक स्कूल ऑफ पोलिटिक्स भी खुला। अब तो लाहौर पाकिस्तान में चला गया परंतु ये दोनों संस्थाएं बहुत पहले ही बंद हो गई थीं। जिनका कहीं कोई नामोनिशान भी शेष नहीं रहा, परंतु डीएवी संस्था आज तक जीवित है। दिन पर दिन उन्नति के नये-नये कीर्तिमान स्थापित कर रही है। नान यूनिवर्सिटी नेशनल कालेज के प्रिंसिपल लाल छबीलदास जी एम.ए. बनाए गए थे जो गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य प्रो. रामदेव जी के जामाता थे। तिलक स्कूल ऑफ पोलिटिक्स के प्रिंसिपल देवतास्वरूप भाई परमानंद जी नियुक्त हुए थे। दोनों संस्थाएं शीघ्र ही समाप्त हो गईं।**

मैं आशा करता हूं कि लोग मुझे पक्षपाती नहीं समझेंगे अपितु वे स्वयं भी महात्मा जी के इस उज्जवल चरित्र से प्रेरणा प्राप्त कर आर्य समाज के सेवाकार्यों में व उपयोगी संस्थाओं के संचालन में गंभीरता, विवेक, विनम्रता, सेवाभाव को कभी हाथ से नहीं जाने देंगे। वास्तव में इन 100 से ऊपर वर्षों में समाज भौतिक रूप से काफी विकास कर चुका है परंतु प्रायः उक्त गुणों के अभाव में विकास व उन्नति का वह रूप नहीं बन पाता जो पुरानी पीढ़ी की नेताओं के पास थोड़े सीमित साधन होते हुए भी बन गया था। आज फिर देश को उसी दिव्य, शालीन व परोपकारी सेवाभाव की आवश्यकता है तभी समाज व राष्ट्र का कल्याण होगा।

OO

**'आर्यों का कर्त्तव्य है कि वे अपने सामने आर्य सिद्धांत रखें और इन सिद्धांतों को आगे बढ़ाते हुए आर्यसमाज को दृढ़ करें।'**

**महात्मा हंसराज**

# दर्शनों का आध्यात्मिक एवं व्यवहारिक महत्व

**आचार्य चंद्रशेखर शास्त्री**

सर्व प्रथम 'दर्शन' शब्द का क्या अर्थ है, यह हमें जानना चाहिए, दार्शनिक विद्वानों ने 'दर्शन' शब्द की परिभाषा निम्न प्रकार से की है-

''दृश्यन्ते ज्ञायन्ते याथातथ्यत आत्मपरमात्मनो बुद्धीन्द्रियादयोऽतीन्द्रियाः सूक्ष्मविषया येन तद् दर्शनम्।''

अर्थात् जिससे आत्मा, परमात्मा, मन, बुद्धि, इन्द्रियों आदि सूक्ष्म विषयों का प्रत्यक्ष होता है- ज्ञान होता है उसको 'दर्शन' कहते हैं।

स्थायी सुख तथा शान्ति की प्राप्ति के लिए आज के मनुष्य ने अत्यन्त पुरुषार्थ किया है और करता जा रहा है, इसने सारी पृथ्वी का स्वरूप ही बदल दिया है। पहाड़ों को मैदानों में बदल दिया, नदियों के प्रवाह मोड़ दिये, इन पर बड़े-बड़े बांध बनाकर नहरों का जाल बिछा दिया है, भूमि के गर्भ में से हजारों प्रकार के खनिज पदार्थ निकाल रहा है; सड़कें, वाहन, संचार-साधन रॉकेट तथा विभिन्न प्रकार के तकनीकी यंत्र, इलैक्ट्रानिक्स साधनों का आविष्कार करके मनुष्य ने भोग-सामग्री का ढेर लगा दिया है। इन सब कार्यो का यही एक लक्ष्य है कि मनुष्य का जीवन सुखी हो, शान्त हो, निर्भय हो। किंतु गहराई से निरीक्षण करें तो हमें पता चलता है कि इतना सब कुछ किये जाने के बाद भी इस मनुष्य का जीवन पूर्व की अपेक्षा और अधिक अशांत, भयभीत तथा दुखी बन गया है। इसका कारण क्या रहा, इसके पीछे कौन सी भूल रही, यह हमें जानना चाहिए। मनुष्य ने अज्ञान, से यह मान लिया है कि 'अधिक से अधिक प्राकृतिक भोग-सामग्री को प्राप्त कर लेने से मेरे सारे रोग, दुःख,भय समाप्त हो जायेंगे।' इसने अपने जीवन का परम लक्ष्य मात्र वित्त (=धन+भोग सामग्री) बना लिया है। प्राचीन ऋषियों ने पूर्ण तथा स्थायी सुख-शांति प्रदान करने वाली जिन अध्यात्मविद्याओं का उपदेश किया था, उन विद्याओं को मनुष्य ने बिल्कुल भुला दिया है। जीवन में से ईश्वर, धर्म, सादगी, संयम, तपस्या को बिल्कुल भुला दिया और दिनचर्या को ध्यान, स्वाध्याय, सत्संग, यज्ञ, सेवा-परोपकार से रहित, भोगपरायण बना दिया है।

यद्यपि पूर्व की अपेक्षा आज मनुष्य के पास भौतिक धन सम्पत्ति और भोग्य सामग्री कहीं अधिक हो गई है, किंतु आध्यात्मिक दृष्टि से मनुष्य दरिद्र, भीरू, इन्द्रियदास, दीन-हीन तथा पशुवत् बन कर रह गया है। मनुष्य में परस्पर प्रेम, श्रद्धा, विश्वास, परोपकार की भावना नष्ट प्रायः हो गई है।

हजारों वर्ष पूर्व हमारे तत्ववेत्ता, महावैज्ञानिक, आप्त, दार्शनिक ऋषियों ने पूर्णतया स्थायी सुख की प्राप्ति के विषय में अपने महत्वपूर्ण निर्णय दिये हैं। इस संबंध में महर्षि कपिल जी ने कहा-

**न दृष्टात् तत् सिद्धिर्निवृत्तेऽप्यनुवृत्तिदर्शनात्।** (सांख्य दर्शन

## इबादत

इबादत के लिए काफी नहीं माला घुमा देना।
किसी मंदिर मस्जिद में कभी सिर को झुका देना।।
इबादत है, किसी बेआसरा को, आसरा देना।
इबादत है किसी मकरूज का कर्जा चुका देना।।
किसी मजलूम को जालिम से छुड़ाना इबादत है।
किसी नादान की मुश्किल में काम आना इबादत है।।
इबादत है यह जीवन कौम की खातिर लगा देना।
इबादत है वतन के वास्ते सर को कटा देना।।
इबादत है किसी भूखे को दो रोटी खिला देना।
इबादत है किसी नंगे को कुछ कपड़े दिला देना।।
किसी बरबाद को आबाद कर देना इबादत है।
किसी नाशाद को दिलशाद कर देना इबादत है।।

**- शांतिलाल खरबंदा**

1-2) अर्थात् प्राकृतिक दृष्ट साधन-धन सम्पत्ति, भूमि, भवन, स्त्री, नौकर चाकर, वाहनादि से सम्पूर्ण दुखों का नाश संभव नहीं है। इसी सिद्धांत को महर्षि याज्ञवल्क्य जी ने निम्न शब्दों में कहा-

**अमृतत्वस्य तु नाशास्ति वित्तेन इति।** (बृ.उ.3-3-2)

अर्थात् केवल धन-सम्पत्ति से परम सुख= मोक्ष प्राप्ति की आशा नहीं की जा सकती। ब्रह्मचारी नचिकेता ने भी अनुभव के आधार पर कहा- न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः (कठोपनिषद् 1-1-27)

अर्थात् धनादि विषय-भोगों से मनुष्य कदापि तृप्त नहीं हो सकता।

भोजन से भूख मिट सकती है, नंगापन नहीं, वस्त्र से नंगापन मिट सकता है किंतु चोर-डाकू से रक्षा नहीं हो सकती, इसके लिए मकान की आवश्यकता होती है। ऐसे ही स्त्री, नौकर, वाहनादि सब भौतिक पदार्थ किसी एक प्रकार की आवश्यकता की पूर्ति करते हैं किंतु धन से प्राप्त ये सभी भौतिक साधन मिलकर भी 'आत्मा की भूख-प्यास' को नहीं मिटा सकते, इसके लिए तो दर्शनों में प्रतिपादित आध्यात्मिक साधना का मार्ग ही अपनाना पड़ता है।

'समस्त समस्याओं का समाधान एक ब्रह्म को जान लेने से ही सम्भव है' इस सिद्धांत के अनुसार ही महर्षि व्यास जी ने अपने ग्रंथ वेदान्तदर्शन का प्रथम सूत्र अथातो ब्रह्म जिज्ञासा। 1-1-1 बनाया।

मनुष्य ने चाहे कितनी ही भाषाओं, विद्याओं, कलाओं को सीख लिया हो, कितनी ही उपाधियों, यश प्रतिष्ठा, धन ऐश्वर्य को क्यों न प्राप्त कर लिया हो, जीवन पथ पर रोग, अभाव विश्वासघात, हानि, वियोग, अपमान, अन्याय से संबंधित दुख आ ही जाते हैं। ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों में मनुष्य चिंतित निराश एवं अशांत हो जाता है। सारी आशाएं व कल्पनाएं नष्ट हो जाती है। सब कुछ अंधकारमय दिखाई देता है। घटनाओं से संबंधित विचारों पर नियंत्रण न रख पाने के कारण मनुष्य अत्यंत क्षुब्ध अथवा पागल सा हो जाता है।

कोई भी समाधान न प्राप्त कर सकने के कारण उत्पन्न हुए महादुख से बचने के लिए वह कुएं में गिरकर, विष खाकर, मिट्टी का तेल डालकर, गाडी के नीचे आकर, फांसी के फंदे पर लटक कर या अन्य किसी प्रकार से जीवन को ही समाप्त कर लेता है। अथवा क्रोध के वशीभूत होकर दूसरों का अनिष्ट कर देता है, फिर चाहे परिणाम स्वरूप जीवन भर पश्चाताप की अग्नि में क्यों न जलना पड़े या जेल के बंधन का जीवन क्यों ना काटना पड़े।

ऐसी अवस्था में यदि व्यक्ति अपने मन में उठने वाले इन प्रतिकूल विचारों को रोकने में समर्थ हो जाए अथवा इन विचारों से प्रभावित न हो अथवा इन समस्याओं का यथोचित समाधान निकाल ले, तो वह उपर्युक्त सभी अनर्थो से बच सकता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या-द्वेषादि मानसिक रोग हैं, इनका समाधान धन-सम्पत्ति से कदापि नहीं हो सकता। इन सब रोगों का समाधान तो आत्मा-परमात्मा संबंधी अध्यात्मविद्या को पढ़-समझकर और व्यवहार में लाने से ही संभव है। मनुष्यों के कल्याणार्थ इन अध्यात्म विद्याओं का वर्णन हमारे पूज्य ऋषियों ने अपने दर्शनों में विस्तार से किया है।

सूक्ष्मता से निरीक्षण किया जाये तो पता चलता है, कि दर्शनों में वर्णित आत्मा-परमात्मा के यथार्थ स्वरूप (= उनके गुण, स्वभाव) का ज्ञान न होने के कारण ही सम्पूर्ण मानव समाज में आज हिंसा, झूठ, छल, कपट, चोरी, जारी तथा अन्य नैतिक दोष उत्पन्न हो गये हैं। यदि मनुष्य शरीर, मन, इंद्रिय के पीछे इन सबकी नियंत्रक-चेतन शक्ति 'आत्मा' को तथा दृश्यमान विशाल ब्रह्मांड के पीछे विद्यमान अदृश्य, नियंत्रक, चेतन शक्ति 'परमात्मा' को जान ले, तो विश्व की सारी समस्याएं सरलता से दूर हो सकती हैं। इन दोनों शक्तियों को जाने बिना अथवा गलत रूप में जानकर उपर्युक्त समस्याओं का चाहे अन्य कोई भी समाधान मनुष्य निकाले, वह अपूर्ण ही रहेगा। समस्त दर्शनों की अध्यात्मविद्याओं का सार हम एक ही वाक्य में जानना चाहें तो महर्षि याज्ञवल्क्य की इस पंक्ति को जान लेना पर्याप्त होगा।

'आत्मा व अरे द्रष्टव्यः श्रोताव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो मैत्रेय्यात्मनो वा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेनेदं सर्व विदितम्' (बृहदारण्यकोपनिषद् 4-5)

अर्थात् आत्मा को ही जानना चाहिए, उसकी चर्चा-व्याख्यान सुनना चाहिए, उस पर मनन-चिंतन करना चाहिए, उसका ही विशेष ध्यान करना चाहिए, आत्मा के दर्शन (ज्ञान) से, उपदेश सुनने से, मनन करने से, पूर्णतया जान लेने से यह सब (चराचर-जगत्) ज्ञात हो जाता है, सब कुछ प्राप्त हो जाता है।

वैदिककाल में मन इन्द्रियों को रोककर आत्म-साक्षात्कार करने की इस क्रिया का इतना अधिक महत्व था कि पांच वर्ष का छोटा सा बालक जब गुरुकुल में पढ़ने जाता था तब से ही आचार्य उसे प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में उठाकर, एकांत, शांत स्थान में बिठाकर, आसन लगवाकर, आंखें बंद कराकर, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान समाधि लगाने जैसी सूक्ष्म क्रियाएं सिखाना प्रारंभ कर देते थे। ऐसा ही ऋषि-मुनि लोग स्वयं किया करते थे। यह क्रिया मृत्यु पर्यन्त चलती रहती थी, चाहे वह अभ्यासी किसी भी आश्रम में क्यां न हो, किसी भी व्यवसाय को क्यों न करता हो।

दर्शनों में इन क्रिया को 'योग' = (समाधि उपासना) नाम से कहा गया है। जीवात्मा चेतन है, ज्ञानी है, कर्ता है, मन आदि का चालक है। मन जड़ है। जीवात्मा प्रत्येक क्षण, अपनी इच्छा से ही, जड़ मन को प्रेरित करके, किसी न किसी वस्तु के विषय में चिंतन=ज्ञान करता ही रहता है। मन के इस व्यापार (=कार्य) के लिए दर्शनों में 'वृत्ति' शब्द का प्रयोग हुआ है। मन की बाह्य और आंतरिक विषयों से संबंधित वृत्तियों को रोक देना 'योग' है।

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः। (योग दर्शन 1/2)

यही बात महर्षि कणाद जी ने अपने शब्दों में इस प्रकार कही है

तदनारम्भ आत्मस्थे मनसि शरीरस्य दुःखाभावः स योगः। (वैशेषिक दर्शन 5/2/16) अर्थात् जो मनुष्य अपने मन को, समस्त सांसारिक विषयों से हटाकर आत्मा-परमात्मा में स्थित कर लेता है, तब वह समस्त शारीरिक, मानसिक दुःखो से रहित हो जाता है, इसे ही 'योग' कहते हैं। योगाभ्यास किस स्थान पर करें, इस विषय में महर्षि गौतम जी ने निर्देश किया कि अरण्यगुहापुलिनादिषु योगाभ्यासोपदेशः। (न्याय दर्शन 4/2/42) अर्थात् योग साधना के लिए जंगल, गुफा, नदी का किनारा आदि स्थान उपयुक्त है। यदि ऐसा स्थान उपलब्ध न हो तो किसी भी शान्त, एकान्त स्थान पर योग साधना की जा सकती है।

एकांत स्थान पर बैठकर सर्वप्रथम सिद्धासन, पद्मासन या अन्य कोई ध्यान का आसन लगाना चाहिए। आसन लगाकर मन की चञ्चलता को रोकने के लिए श्वास और प्रश्वास की गति को यथा सामर्थ्य रोककर 'प्रणायाम' करना चाहिए।

# जीवन में सफलता

**जीवन** में सफलता पाने की आकांक्षा तो हर किसी के मन में होती है लेकिन वास्तविक सफलता पाने के लिए निश्चित रूप से कुछ विशेष बातों की ओर ध्यान देना जरूरी है। उस ध्यान का रास्ता हमें वैदिक उपासना से वेद मंत्रों द्वारा दिखाई देता है। वैदिक पद्धति से जो गुणकारी बातें विद्वानों द्वारा कहीं हैं उन पर अमल नहीं होता। साधारण जीवन में भक्ति में लीन होना, सत्य पर अमल करना, मन में अहंकार का भाव न आने देना जीवन का परम उद्देश्य है।

शुभ विचार प्रभु के अनंत भंडार से प्राप्त होता है वही शुभ का सौरभ है, बवंडर है तमोगुण का अंधेरा है। प्रभु का आश्रय छोड़कर हम संसार के प्रवाह में पड़कर रजोगुणी तमोगुणी प्रवृतियों में उलझ जाते हैं। मुकाबला करें तभी शांति और शुभ का अनुभव कर सकेंगे। अपने कर्त्तव्य का पालन कर प्रभु के दिव्य गुणों को ग्रहण कर जीवन को आनंदमय बना सकेंगे। प्रभु के अनगणित उपकारों का स्मरण कर कृतज्ञमन जब उसका धन्यवाद देने के लिए झुकता है तभी वस्तुतः स्तुति व भक्ति होती है। प्रभु प्रेम में गद्‌गद्‌ होकर भगवान का भजन करना जीवन की सार्थकता है।

**सामवेद का मंत्र है-**
**यँ रक्षन्ति प्रचेवसो करुंणा मित्रो अर्यमा**
**न किः सदम्यते जनः**

एक व्यक्ति की सफलता का रहस्य बताते हुए कहा है कि मनुष्य जिसके वरुण मित्र और अर्यमा रक्षक है वह कभी मारा नहीं जा सकता अर्थात्‌ आंतरिक और बाह्य शत्रु उसे असफल नहीं कर सकते। दूसरे शब्दों में मनुष्य को अपना आचरण ऐसा बनाना चाहिए कि संसार के वरणीय श्रेष्ठ पुरुष उसके चरित्र से प्रभावित होकर अपनी रक्षा करें।

जीवन की सफलता की ये ही चार विशेषताएं हैं (प्रवेतस) व्यापक ज्ञान के आधार पर विवेक पूर्वक आचरण वालों को प्रचेतस कहते हैं, ऐसे लोग जो अपने विशेष गुण से अपनी ओर आकृष्ट करते हैं।

**श्रीमती सावित्री छाबड़ा**

## स्वराज्य के प्रथम सन्देशवाहक

स्वामी दयानन्द सरस्वती को सामान्यतः केवल आर्य समाज के संस्थापक तथा समाज-सुधारक के रूप में ही जाना जाता है। राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए किये गए प्रयत्नों में उनकी उल्लेखनीय भूमिका की जानकारी बहुत कम लोगों को है। वस्तुस्थिति यह है कि पराधीन आर्यावर्त में यह कहने का साहस सम्भवतः सर्वप्रथम स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ही किया था कि 'आर्यावर्त, आर्यावर्तियों का है'। हमारे प्रथम स्वतन्त्रता समर, सन्‌ 1857 की क्रान्ति की सम्पूर्ण योजना भी स्वामी जी के नेतृत्व में ही तैयार की गई थी और वही उसके प्रमुख सूत्रधार भी थे। वे अपने प्रवचनों में श्रोताओं को प्रायः राष्ट्रवाद का उपदेश देते और देश के लिए मर मिटने की भावना भरते थे। 1855 में हरिद्वार में जब कुम्भ मेला लगा था तो उसमें शामिल होने के लिए स्वामी जी ने आबू पर्वत से हरिद्वार तक पैदल यात्रा की थी। रास्ते में उन्होंने स्थान-स्थान पर प्रवचन किए तथा देशवासियों की नब्ज टटोली। उन्होंने यह अनुभव किया कि लोग अब अंग्रेजों के अत्याचारी शासन से तंग आ चुके हैं और देश की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने को आतुर हो उठे हैं।

# 'विश्ववारा संस्कृति' के नियम व सविनय निवेदन

1. यदि 'विश्ववारा संस्कृति' दिनांक 15 तक नहीं पहुंचती है तो आप प्रधान संपादक के नाम पत्र डालें। पत्र मिलते ही 'विश्ववारा संस्कृति' पुनः भेज दी जायेगी।

2. वार्षिक शुल्क तथा आजीवन शुल्क मनीआर्डर द्वारा आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा के नाम भेजें। वीपी रजिस्ट्री द्वारा नहीं भेजा जायेगा।

3. लेख संपादक 'विश्ववारा संस्कृति' के नाम भेजें, लेख छोटे, सरल, संक्षिप्त होने चाहिए तथा स्पष्ट, शुद्ध एवं सुंदर लेख कागज के एक ओर लिखे होने चाहिए।

4. 'विश्ववारा संस्कृति' में विज्ञापन भी दिये जाते हैं, परंतु विज्ञापन शुद्ध एवं वास्तविक वस्तु का ही दिया जायेगा।

5. यह 'विश्ववारा संस्कृति' पत्रिका समाज-सुधार की दृष्टि से मानव कल्याणार्थ निकाली जाती है। इसमें आपको धर्म, यज्ञ कर्म, समाज सुधार, देश व समाज की स्थिति, ब्रह्मचर्य, स्वास्थ्य, योगासन, सदाचार, संस्कार, नैतिकता, वैदिक विचार, शिक्षा आदि एवं अन्य ऐसे विषयों पर लेख पढ़ने को मिलेंगे।

6. 'विश्ववारा संस्कृति' के दस ग्राहक बनाने वाले सज्जन को एक वर्ष तक निःशुल्क 'विश्ववारा संस्कृति' भेजी जायेगी तथा पचास ग्राहक बनाने वाले सज्जन को दो वर्ष निःशुल्क पत्रिका भेजी जायेगी तथा उसका फोटो सहित जीवन-परिचय 'विश्ववारा संस्कृति' में निकाला जायेगा।

7. अन्य पत्र-पत्रिकाओं में पहले छपा हुआ लेख 'विश्ववारा संस्कृति' में नहीं छापा जायेगा।

8. अनाधिकृत रूप से लिए लेख, रचना, कविता के लिए प्रेषक ही उत्तरदायी होंगे।


**आर्य कै. अशोक गुलाटी**
**प्रबंध संपादक**
**'विश्ववारा संस्कृति'**
**आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, उप्र**
**संपर्क सूत्र : 0120-2505731,**
**9871798221, 9555779571**
ई-मेल : infoaryasamajnoida33@gmail.com


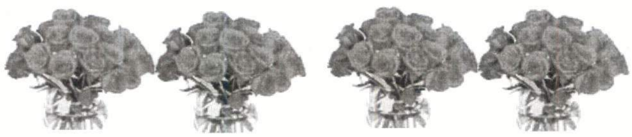

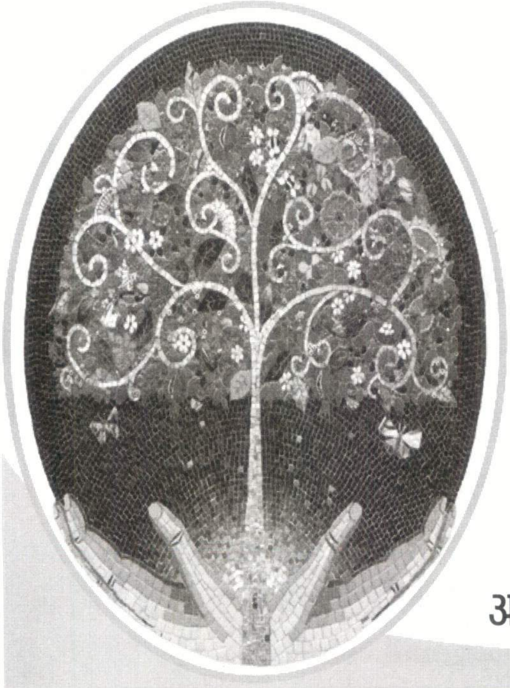

**रूपेण गुण पराक्रमवर्जितेन।**
जिस रूप में गुण या पराक्रम न हो उस रूप का क्या उपयोग?

**लुब्धानां याचको रिपुः।**
लोभी मानव को याचक शत्रु जैसा लगता है।

**वरं मौनं कार्य न च वचन मुक्तं यदनृतम।**
असत्य वचन बोलने से तो मौन धारण करना अच्छा है।

# विश्ववारा संस्कृति

- सभी धार्मिक सामाजिक पत्रों की अपेक्षा अधिक संख्या में प्रकाशित होने वाली पत्रिका।
- वर्ष में 12 अंक प्राप्त करें।
- 'विश्ववारा संस्कृति' का वार्षिक सदस्यता शुल्क 250 रुपया है। और आजीवन सदस्यता शुल्क 2500 रुपया है।
- 'विश्ववारा संस्कृति' का विदेश में वार्षिक सदस्यता शुल्क 3100 रुपया है।
- लेखक अपने विचार, लेख, कविता आदि प्रकाशन सामग्री प्रत्येक मास की 2-4 तारीख तक भेज दिया करें।
- जिस मास से शुल्क भेजेंगे तभी से सदस्यता प्रारम्भ होगी।
- नमूना कॉपी के लिए रु. 20 का धन-आदेश द्वारा अग्रिम भेजें।
- प्रत्येक पत्र व्यवहार में अपनी सदस्यता संख्या अवश्य लिखें और उत्तर चाहने वाले व्यक्ति दोहरा कार्ड या टिकट भेजें।
- प्रत्येक पत्र-व्यवहार में अपना पता भी हिन्दी में साफ-साफ लिखा करें।
- आपके सुझाव अपेक्षित हैं।

■ प्रबंध संपादक

# 'विश्ववारा संस्कृति' : सदस्यता आवेदन पत्र

नाम : ............................................................

उम्र : .................................... दिनांक : ....................

पता : ............................................................

............................................................

शहर : .................... राज्य : .................... पिन कोड : ....................

फोन : .................................... मोबाइल : ....................

नगद/चैक/मनी आर्डर/डीडी संख्या : ....................................

संरक्षक/आजीवन/पंच वर्षीय/वार्षिक सदस्यता हेतु संलग्न है।

चैक-मनी आर्डर 'आर्य समाज' के नाम भिजवाएं अथवा आप लोग सीधे ही 'यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया' नोएडा, सेक्टर-33 में खाता संख्या : 1483010100182, IFSC-UTB10SCN560 में जमा कराकर रसीद की प्रतिलिपि निम्न पते पर भेजें-

**प्रबंध संपादक**
**'विश्ववारा संस्कृति'**
**आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, (उप्र)**
**संपर्क सूत्र : 0120-2505731, 9871798221, 9555779591**
**ई-मेल : infoaryasamajnoida33@gmail.com**

# आयोजित कार्यक्रम

**23 मार्च :** शहीदी दिवस के अवसर पर शहीद भगत सिंह, राजगुरु, सुखदेव को भावभरी श्रद्धांजलि दी गई और उनके बलिदान के विषय में ब्रह्मचारियों और श्रोताओं को बताया गया। केंद्रीय आर्य युवक परिषद के तत्वावधान में जंतर मंतर पर कार्यक्रम आयोजित हुआ।

**28 मार्च :** आर्य समाज स्थापना दिवस के अवसर पर विशेष यज्ञ के साथ विशेष कार्यक्रमों का आयोजन किया गया तथा आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती के उपकारों का वर्णन किया गया। जनमानस को प्रसाद और वैदिक साहित्य वितरित किया गया। दिल्ली केंद्रीय सभाओं की ओर से कमानी हाल में विशेष कार्यक्रम आयोजित हुआ। आर्य समाज नोएडा के सदस्यों ने भाग लिया।

**5 अप्रैल :** मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी का जन्मदिन रामनवमी बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया गया तथा गुरुकुल नोएडा के ब्रह्मचारियों को उनके आदर्श व्यक्तित्व के बारे में बताया गया।

**6 अप्रैल :** महाशह राजपाल बलिदान दिवस पर समस्त पदाधिकारियों एवं गुरुकुलवासियों की ओर से भावपूर्ण श्रद्धांजलि दी गई और उनके उपकारों को ब्रह्मचारियों को बताया गया। हमारे गुरुकुल के छात्रावास का नाम उनके नाम पर रखा गया है।

**19 अप्रैल :** महात्मा हंसराज जयंती के अवसर पर विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया गया तथा उनके आदर्श व्यक्तित्व को श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत किया गया।

# आगामी कार्यक्रम

**26 अप्रैल :** पं. गुरुदत्त विद्यार्थी के जन्म दिवस पर विशेष कार्यक्रम का आयोजन किया जायेगा तथा देश और राष्ट्र के लिए दिये योगदान को समस्त श्रोताओं के सम्मुख प्रस्तुत किया जायेगा।

**11 मई :** स्वामी दर्शनानन्द देहान्त

**15 मई :** स्वामी दीक्षानन्द देहान्त तपोवन देहरादून में अग्नीहोत्री ट्रस्ट द्वारा कार्यक्रम

**28 मई :** वीर सावरकर जयंती

**31 मई :** श्याम जी कृष्ण वर्मा जयंती

# आर्ष गुरूकुल, बी-69, सैक्टर-33, नोएड़ा

## प्रवेश-सूचना

गुरूकुल में नवीन सत्र 2017-18 के लिए अप्रैल 2017 में प्रवेश आरम्भ हो रहे हैं। प्रवेश के इच्छुक विद्यार्थी की आयु 10 वर्ष (5वीं पास) होना चाहिए। पाठ्यक्रम गुरूकुल कांगडी विश्वविद्यालय हरिद्वार एवं उ.प्र.मा.सं.शि. परिषद लखनऊ एवं सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी से सम्बन्धित होगा। गुरूकुलीय दिनचर्या, शारीरिक एवं बौद्धिक विकास के लिए आसन, प्राणायाम, व्यायाम, तथा शुद्ध शाकाहारी भोजन, गाय के दूध की व्यवस्था।

| | | |
|---|---|---|
| प्रवेश शुल्क | : | 5100/- |
| भोजन शुल्क | : | 1500/- प्रतिमाह |

**शिक्षा निःशुल्क**

**विद्यालय की नियमावली एवं प्रवेश फार्म प्राप्त करने हेतु सम्पर्क करें-**

**सम्पर्क सूत्र : 0120-2505731**

**लिखित परीक्षा : 30 मई 2017, प्रातः - 10 बजे**

**साक्षात्कार**
**लिखित परीक्षाएं**
**उत्तीर्ण होने पर**

कुलभूषण जाधव को पाक सैनिक न्यायालय द्वारा फांसी के आदेश का विरोध करते आर्ष गुरुकुल नोएडा के ब्रह्मचारीगण।

कुलभूषण जाधव की रिहायी के लिए यज्ञ में उपस्थित आर्ष गुरुकुल नोएडा के ब्रह्मचारीगण।

कुलभूषण जाधव की फांसी के विरोध में तथा उनकी रिहायी के लिए यज्ञ करते हुए आर्ष गुरुकुल नोएडा के पदाधिकारी एवं शिक्षकगण।

कुलभूषण जाधव की रिहायी के लिए ईश्वर से प्रार्थना एवं यज्ञ कराते हुए यज्ञब्रह्मा डॉ. जयेन्द्र कुमार।

# विश्ववारा संस्कृति

**आर्य समाज, बी-69, सैक्टर-33, नोएड़ा (उ.प्र.) दूरभाष : 0120-2505731**